श्रीमन्निकुञ्जविहारिणे नमः

सचित्र

श्री लीला सागर

अनन्त श्री विभूषित

स्वामी श्रीचरणदासजी महाराज का जीवन चरित्र

एवं

उनके कृपापात्र लगभग ६० संतों की महिमा

ध्यानेश्वर श्री जोगजीतजी कृत

रचना काल वि० सं० १८१६

प्रकाशक:—

श्री शुक चरणदासीय साहित्य प्रकाशक ट्रस्ट,

जयपुर (राजस्थान)

दीक्षा महोत्सव दिवस

चैत्र शुक्ला १ सं० २०२५ वि.

मूल्य

२.००

॥ श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः ॥

॥ श्री शुकदेव श्याम चरणदासाभ्यां नमः ॥

॥ श्री सद्गुरु चरण कमलेभ्यो नमः ॥

सम्प्रदाय शुकदेव मुनि, चरणदास गुरु द्वार ।
परम धर्म भागवत मत, भक्ति अनन्य विचार ॥

राधा कृष्ण उपास्य, धर्म भागवत हमारो ।
निज वृन्दावन धाम, मुक्ति सामीप्य निहारो ॥

तीरथ गंगा जान, व्रत ग्यारस को धारो ।
क्षमा शील सन्तोष, दया निज हिए विचारो ॥

सम्प्रदाय शुकदेव मुनि, आचारज चरणदास ।
'रामरूप' तिन पद शरण, नवधा भक्ति निवास ॥

—मुक्तिमार्ग

श्री कुंज विहारी श्री शुकदेव, श्याम चरणदास जै श्री गुरुदेव

प्राक्कथन

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानम् सृजाम्यहम् ॥

जब जब धर्म का ह्रास और अधर्म की वृद्धि होती है तब २ भगवान् स्वयं अवतार लेते हैं अथवा आचार्यों और सन्तों के रूप में अपने अंश को प्रगट करके धर्म की स्थापना करते हैं। जब भारत में यवनों के भयंकर अत्याचार हुए उस समय अनेक आचार्यों और सन्तों का प्रादुर्भाव हुआ। मुगल साम्राज्य के अंतिम काल में भृगुवंश भूषण परम भक्त मुरलीधर जी के यहाँ भगवान् ने अपने अंश से सं० १७६० में भाद्रपद शुक्ला ३ को रणजीत नाम से अवतार लिया।

१६ वर्ष की अवस्था में शुकतार* स्थान पर व्यासनन्दन मुनीन्द्र श्री शुकदेवजी महाराज ने आपको गुरु दीक्षा देकर आपका दूसरा नाम श्रीचरणदास रखा। गुरुदीक्षा प्राप्त करके आपने १३ वर्ष योगाभ्यास करके सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त कर लीं जिनका इस पुस्तक मे पद पद पर वर्णन है। आपने अपने गुरुदेव के नाम से जीवों के कल्याणार्थ एक सम्प्रदाय की स्थापना की जिसका नाम

---

*यह स्थान मुजफ्फर नगर से १६ मील दूर है। यहाँ श्री शुकदेवजी महाराज ने राजा परीक्षित को श्रीमद्भागवत की कथा सुनाकर मुक्त किया था। इसको आजकल शुक्रताल कहते हैं।

"शुकसम्प्रदाय" रखा। आपके हजारों शिष्य हुए जिन्होंने सम्पूर्ण भारतवर्ष में भक्ति का प्रचार किया। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की है जिनका संग्रह 'भक्तिसागर' के नाम से मुद्रित होकर प्रकाशित हो चुका है। आपके शिष्यों ने भी अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। आपके दो शिष्यों ने आपकी जीवनी लिखी है। एक का नाम "गुरु भक्ति प्रकाश" है, जो स्वामी श्री रामरूपजी ने लिखी है। वह प्रकाशित हो चुकी है। दूसरी प्रस्तुत पुस्तक "श्री लीलासागर" है, जो ध्यानेश्वर श्री जोगजीतजी ने लिखी है। यह अबतक अप्रकाशित थी और भी अनेक ग्रन्थ अभी अप्रकाशित हैं; तथा जो प्रकाशित हुए हैं वे भी अप्राप्त हैं। कई भक्तों की यह अभिलाषा थी कि साहित्य के प्रकाशनार्थ एक ट्रस्ट का निर्माण किया जाय जो सुचारु रूप से इस कार्य को करे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये एक ट्रस्ट का निर्माण किया गया जिसका नाम "श्री शुक चरणदासीय साहित्य प्रकाशक ट्रस्ट" रखा गया। इसकी रजिस्ट्री ता: १७ अप्रेल सन् १९६७ को करा ली गई है। ट्रस्ट ने यह निर्णय किया कि वर्तमान में कार्य प्रारम्भ करने के लिये १००००) रु० का चन्दा कर लिया जाय। इस ट्रस्ट के निम्न ट्रस्टी एवं पदाधिकारी हैं:—

ट्रस्टी

निम्न महानुभावों ने निम्न प्रकार चंदा दिया है:—

१००१) श्री कृष्ण जीवन भार्गव
१००१) श्री जमना लालजी रामचन्द्रजी
१००१) श्री शंकरलालजी रामनिवासजी चितलांगिया
१००१) श्री भँवरलालजी हीरालालजी चितलांगिया
५०१) श्री लछमी नारायणजी चितलांगिया
५०१) श्री राधेश्यामजी अग्रवाल
५०१) श्री श्यामबिहारी लाल जी भार्गव
५०१) श्री सतीशचन्द्रजी लोईवाल

ट्रस्ट की यह नीति है कि साहित्य के अधिकाधिक प्रचार के हेतु केवल लागत मूल्य पर ही पुस्तकों का मूल्य रखा जाय, लाभ की दृष्टि न रखी जाय। ट्रस्ट ने सर्वप्रथम प्रस्तुत पुस्तक को ही प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

इस पुस्तक में श्री चरणदासजी महाराज की अलौकिक लीलाएं, दैवी चमत्कार, साधना, सिद्धान्त और उपदेशों का बड़े ही रोचक और गंभीर रूप में वर्णन हुआ है ।

ट्रस्ट का ऐसा विचार है कि इस ग्रन्थ के पश्चात् भक्तिसागर को मुद्रण कराया जाय । भक्तिसागर के अब तक जो भी संस्करण निकले हैं उनमें अशुद्धियां बहुत हैं; जिसके परिणाम स्वरूप कहीं कहीं भाव ग्रहण करने में बड़ी कठिनाई हो जाती है । इसलिये उसको शुद्ध करके छपाना परम् आवश्यक है। इसके अतिरिक्त भक्तिसागर में एक "भक्ति पदार्थ" नामक ग्रन्थ है जिसको यदि श्री मद्भागवत का सार कहें तो भी अत्युक्ति नहीं होगी । इस ग्रन्थ में ब्रह्म, जीव, जगत, निराकार, साकार, निर्गुण, सगुण, बंध, मोक्ष, आदि सारे सिद्धान्तों का तात्त्विक विवेचन और निर्णय किया है माया का स्वरूप और उससे छूटने के सम्पूर्ण साधनों का बहुत ही सरस और गंभीर विवेचन है । इसे अध्ययन कर लेने पर ऐसा मालुम होता है कि अब कुछ पढ़ना शेष नहीं रहा। इस ग्रन्थ को भी शीघ्र ही पृथक मुद्रण कराने का विचार है । और भी जो ग्रन्थ अब तक अमुद्रित हैं वे मुद्रित कराये जावेंगे । इन सभी कार्यों में सहयोग की आवश्यकता है पाठकों से निवेदन है कि वे तन, मन और धन के सहयोग से इस कार्य को आगे बढ़ाने की कृपा करें ।

इस साहित्य प्रकाशन के लिये ट्रस्ट का निर्माण करने में स्वामी प्रेमस्वरूपजी महाराज ने अथक परिश्रम किया, पुस्तक के प्रूफ संशोधन तथा ब्लाक आदि बनवा कर पुस्तक छपाने में हार्दिक लगन एवं प्रेम से सेवा की, श्री श्याम बिहारी लालजी भार्गव बड़ी श्रद्धा और प्रेम से इस कार्य को मूर्तरूप देने में संलग्न हैं । इन दोनों ही महानुभावों का मैं हृदय से आभारी हूँ ।

इस पुस्तक में कहीं कहीं प्रान्तीय शब्द एवं मुहावरों का प्रयोग होने से भाव समझने में कठिनाई आजाती है; अतः पाठक ध्यान से समझने का प्रयत्न करेंगे। छापे की अशुद्धियाँ भी रह गई हैं। और भी कोई त्रुटि पाठकों की दृष्टि में आवे तो सूचना देने की कृपा करें जिससे अगले संस्करण में संशोधन कर दिया जाय। श्री जोगजीतजी महाराज की जीवनी जो कुछ उपलब्ध हो सकी वह दे दी गई है किन्हीं महानुभावों को विशेष जानकारी हो तो सूचना देने की कृपा करें।

इस ट्रस्ट के प्रकाशन के प्रथम पुष्प आत्म कल्याण की नौका रूप इस ग्रन्थ रत्न को प्रकाशित कराने में मैं अपना सौभग्य मानता हूँ। यह सब स्वामी आत्मानन्द जी मुनिजी जैसे महान् संतों के सत्संग का ही पावन प्रभाव है। ऐसे आध्यात्मिक सत्संग से मेरी रुचि सत्साहित्य के प्रकाशनों में स्वतः ही बढ़ गई है। और इसी प्रेरणा स्वरूप इस ट्रस्ट का भार भी मैंने ग्रहण किया है। मैं आशा करता हूँ कि पाठक इस ग्रन्थ का अधिकाधिक लाभ उठावेंगे और अपने इष्ट-मित्रों को प्ररणा देकर इससे लाभान्वित करायेंगे।

दीक्षामहोत्सव,
चैत्र शुक्ला प्रतिपदा
वि सं० २०२५
शारदा भवन,
जयपुर ३ (राजस्थान)

दासानुदास
कृष्णजीवन भार्गव
अध्यक्ष
श्री शुक चरणदासीय साहित्य
प्रकाशक ट्रस्ट, जयपुर

निवेदन

किसी भी विचारधारा एवं साधन पद्धति की रक्षा के लिये उसके साहित्य की रक्षा करना आवश्यक है। श्री युक सम्प्रदाय का साहित्य सर्वदेशी एवं सर्वोपयोगी है। प्रातः स्मरणीय जयपुर निवासी श्री सरसमाधुरी जी महारज ने सर्व प्रथम श्री भक्तिसागर आदि अनेक ग्रन्थों का मुद्रण करा कर बड़ी भारी सेवा की। आपकी पद्यबद्ध मौलिक रचनाएँ भी लगभग १४०० पृष्ठों में छपी हुई हैं। आपके हजारों विरक्त और गृहस्थ शिष्य हैं। आपने सम्प्रदाय का बहुत भारी प्रचार किया। महन्त श्री गंगादासजी गद्दी सु. श्री सहजो बाईजी ने भी अनेक ग्रन्थों का मुद्रण कराया है। परन्तु अब तक जो भी मुद्रण हुए हैं वे व्यक्तिगत रूप से ही हुए हैं। जिसके परिणाम स्वरूप ग्रन्थ अप्राप्य हो जाने पर पाठकों को कठिनाई हो जाती है। बड़ी कठिनाई से प्रेसों की अनुनय विनय करके ग्रन्थ छपाये जाते हैं तो वे लोग मनमानी कीमत लेकर लाभ उठाना चाहते हैं। अतः मेरे हृदय में बहुत समय से यह प्रेरणा उठ रही थी कि प्रकाशन के कार्य को संगठित रूप दिया जाय तो यह कठिनाई दूर हो सकती है, और यह कार्य सुचारु रूप से चल सकता है। यह बात मैंने श्री कृष्णजीवन जी भार्गव के समक्ष प्रकट करी। उन्होंने अपनी उदारता का परिचय देते हुए तन, मन और धन से सहयोग देने का आश्वासन दिया। परिणाम स्वरूप एक ट्रस्ट का निर्माण किया गया जिसका विवरण प्राक्कथन में दे दिया गया है। श्री भार्गव साहब ही इस "श्री लीलासागर" ग्रन्थ का मुद्रण कराने की सम्पूर्ण व्यवस्था बड़े परिश्रम और चाव

से कर रहे हैं। आर्थिक सहायता के द्वारा इस कार्य को क्रियात्मक रूप देने में श्री छगनलालजी जितलांगिया आदि महानुभावों ने सहयोग दिया। हस्तलिखित ग्रन्थ को संशोधन करके प्रेस कापी तैयार करने में श्री अलबेली माधुरी शरणजी महाराज, श्री मदनमोहन जी तोदनीवाल और पं० श्री पुरुषोत्तमजी शर्मा ने बड़ा परिश्रम किया। ग्रन्थ रचयिता का परिचय देने में श्री श्यामसुन्दरजी शुक्ल एम. ए. पी. एच डी. अध्यापक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने बड़ी सहायता की। महन्त श्री गंगादासजी ने समय समय पर उचित परामर्श देने की कृपा की। श्री नारायणलालजी माथुर ने प्रूफ संशोधन में बड़ा सहयोग दिया।

उपरोक्त सभी महानुभावों ने इस कार्य को सफल बनाने की कृपा की है, उन सबका मैं हृदय से आभारी हूँ।

विनयावनत
भगवद्दासानुदास
प्रेमस्वरूप,
शुकभवन मोहल्ला दुसायत,
वृन्दावन।

ग्रन्थकार श्रीजोगजीतजी महाराज की सूक्ष्म जीवनी

इस ग्रन्थ के रचयिता परम गुरुनिष्ठ ध्यानेश्वर स्वामी श्री जोगजीत जी महाराज हैं। आपका जन्म इन्द्रप्रस्थ में वैश्यकुल में वि सं० १७७४ में हुआ था। आपका जन्मनाम हरिदास था। आपके पिता का नाम श्री गोविंद रायजी था। पूर्व संस्कारानुसार जन्म से ही आपको हरिभक्ति में तीव्र लगन थी। अतः आपके अभिभावकों ने आपको बाल्यकाल से ही स्वामी श्री श्यामचरणदासजो* महाराज के समर्पण कर दिया था। आपकी शिक्षा श्री महाराज की ही अध्यक्षता में हुई तथा आपकी अष्टांग योग में अभिरुचि होने से आपको श्री महाराज ने दीक्षा प्रदान करने के अनन्तर योग साधना में प्रवृत्त कर दिया। श्री सद्गुरु कृपा से आपको अल्प काल में ही योग के आठों अंग सिद्ध हो जाने से गुणों के अनुरूप ही आपका "जोगजीत" नाम रखा गया; और अत्यन्त ध्यानारूढ़ रहने से दूसरा नाम ध्यानेश्वर रखा गया। चूंकि आपको श्री भगवान् और भक्तों की सेवा करने का बड़ा उत्साह था, अतः आपको "भक्तानंद" नाम से भी कहते थे।

श्री जोगजीत जी महाराज प्रायः श्री गुरुदेव के चरणों में दिल्ली ही में विराजे। आप श्री महाराज के प्रारम्भिक शिष्यों में से

---

*श्री चरणदासजी महाराज का नाम श्री श्यामचरण दासजी महाराज भी प्रचलित है।

थे। वि. सं० १७६३ में जब आपको १६ वर्ष की अवस्था थी तब ही आप योग की उत्कृष्ट क्रिया जानते थे जो निम्न दृष्टांत से स्पष्ट होती है।

एक बार श्री चरणदासजी महाराज गुफा में समाधिस्थ थे जिसके बाहर छप्पर लगा हुआ था। गुफा के पास आग लग जाने से इनके छप्पर में भो अग्नि आ लगी और वह जलकर गुफा पर गिर पड़ा, परन्तु श्री महाराज को कोई क्षति नहीं हुई। अग्नि लगने के समय श्री जोगजीतजी वहाँ नहीं थे, पर जब आप आये तो आपने योगयुक्ति से श्री महाराज की समाधि जगाई:—

"हुता न साधक वहाँ वा वारा। इनके छप्पर को भी जारा॥
देखा अंग आँच नहिं आई। साधक भी पहुँचा था आई॥
करके जतन समाधि जगाई। खुली आँख तन की सुधि पाई॥
—लीलासागर पृष्ठ ११४

श्री जोगजीत जी महाराज को गुरु कृपा से योग की पूर्णता के कारण स्वरूप स्थिति एवम् निर्गुण पद का पूर्ण अनुभव प्राप्त हो गया था, परंतु सगुण साकार लीला में निम्न घटना के समय तक इतनी गति नहीं हो पाई थी।

एक दिन नई बस्ती के स्थल मे श्री चरणदासजी महाराज शरद पूर्णिमा की रात्रि मे बिराजमान थे और श्री जोगजीत जी भी सेवा में उपस्थित थे। उस समय श्री चरणदासजी महाराज ने सहज भाव में निम्न आज्ञा की —

शरद पून्यों की रैन सुहाई। चाँदनी छिटक रही सुखदाई॥
महाराज बोले मुसकाई। आज रास कियो कुँवर कन्हाई॥

यह सुन कर श्री जोगजीतजी ने अवसर जान कर यह प्रार्थना की:—

हाथ जोड़ मैं अरज करायो। श्री शुकदेव गुरु तुम्हें दिखायो ॥
तुम हमरे समरथ गुरुदेवा । सोई दिखाओ हमको भेवा ॥
होय मुदित कहि मूँद जो नैना। खोलियो जब मैं भाखूँ बैन॥
अमरलोक ही ध्यान करायो। रास मंडल को चित में लायो ॥
तब मो शिर पर हाथ धराही। रास मंडल का रूप लहा ही ॥

दोहा- चौंसठ खम्भा मध्य ही, निरख्यो अद्भुत ख्याल।
आसपास निरतें सखी, मध्य लाड़ली लाल ॥

अद्भुत लीला हिये निहारी। ता छवि को कछु अन्त न पारी ॥
शारद कहि न सके अहिराई। सो छवि श्री महाराज दिखाई ॥
श्री शुक मुख भागोत बखानी। तिनहू कहि संक्षेप बखानी ॥
पृथ्वी के कणिका गिन आवे। ता छवि को मो अंत न पावै ॥
तान, मान, गान, गति जु जैसी। जग में कहा बखानू ऐसी ॥
—लीलासागर पृष्ठ ३२१

इस प्रकार श्री जोगजीतजी ने सद्गुरु कृपा से अमरलोक* अखण्ड धाम की अद्भुत रास लीला के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त किया। जब आपके गुरुभाइयों ने आपसे पूछा कि आपको निर्विकल्प समाधि सिद्ध है तथा तुरीय पद का सुख प्राप्त है और आपने भगवान्

*नित्य वृन्दावन को ही श्री चरणदासजी महाराज ने अमरलोक के नाम से कहा है ।

थे। वि. सं० १७६३ में जब आपको १६ वर्ष की अवस्था थी तब ही आप योग की उत्कृष्ट क्रिया जानते थे जो निम्न दृष्टांत से स्पष्ट होती है।

एक बार श्री चरणदासजी महाराज गुफा में समाधिस्थ थे जिसके बाहर छप्पर लगा हुआ था। गुफा के पास आग लग जाने से इनके छप्पर में भी अग्नि आ लगी और वह जलकर गुफा पर गिर पड़ा, परन्तु श्री महाराज को कोई क्षति नहीं हुई। अग्नि लगने के समय श्री जोगजीतजी वहाँ नहीं थे, पर जब आप आये तो आपने योगयुक्ति से श्री महाराज की समाधि जगाई:—

"हुता न साधक वहाँ वा बारा। इनके छप्पर को भी जारा॥
देखा अंग आँच नहिं आई। साधक भी पहुँचा था आई॥
करके जतन समाधि जगाई। खुली आँख तन की सुधि पाई॥
—लीलासागर पृष्ठ ११४

श्री जोगजीत जी महाराज को गुरु कृपा से योग की पूर्णता के कारण स्वरूप स्थिति एवम् निर्गुण पद का पूर्ण अनुभव प्राप्त हो गया था, परंतु सगुण साकार लीला मे निम्न घटना के समय तक इतनी गति नहीं हो पाई थी।

एक दिन नई बस्ती के स्थल मे श्री चरणदासजी महाराज शरद पूर्णिमा की रात्रि में बिराजमान थे और श्री जोगजीत जी भी सेवा में उपस्थित थे। उस समय श्री चरणदासजी महाराज ने सहज भाव में निम्न आज्ञा की –

शरद पून्यों की रैन सुहाई। चाँदनी छिटक रही सुखदाई॥
महाराज बोले सुखदाई। आज राम कियो कुँवर कन्हाई॥

यह सुन कर श्री जोगजीतजी ने अवसर जान कर यह प्रार्थना कीः—

हाथ जोड़ मैं अरज करायो। श्री शुकदेव गुरु तुम्हें दिखायो॥
तुम हमरे समरथ गुरुदेवा। सोई दिखाओ हमको भेवा॥
होय मुदित कहि मूँद जो नैना। खोलियो जब मैं भाखूँ बैन॥
अमरलोक ही ध्यान करायो। रास मंडल को चित में लायो॥
तब मो शिर पर हाथ धराही। रास मंडल का रूप लहा ही॥

दोहा- चौंसठ खम्भा मध्य ही, निरख्यो अद्भुत ख्याल।
आसपास निरतें सखी, मध्य लाड़ली लाल॥

अद्भुत लीला हिये निहारी। ता छवि को कछु अन्त न पारी॥
शारद कहि न सके अहिराई। सो छवि श्री महाराज दिखाई॥
श्री शुक मुख भागोत बखानी। तिनहू कहि संक्षेप बखानी॥
पृथ्वी के कणिका गिन आवे। ता छवि को मो अंत न पावै॥
तान, मान, गान, गति जु जैसी। जग में कहा बखानू ऐसी॥
—लीलासागर पृष्ठ ३२१

इस प्रकार श्री जोगजीतजी ने सद्गुरु कृपा से अमरलोक* अखण्ड धाम की अद्भुत रास लीला के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त किया। जब आपके गुरुभाइयों ने आपसे पूछा कि आपको निर्विकल्प समाधि सिद्ध है तथा तुरीय पद का सुख प्राप्त है और आपने भगवान्

*नित्य वृन्दावन को ही श्री चरणदासजी महाराज ने अमरलोक के नाम से कहा है।

की नित्य रास लीला के आनन्द का भी रसास्वादन किया है; अब आप हमें बताइये कि इन दोनों में कौन सा आनन्द विशेष है, तब आपने अपना निर्णय निम्न शब्दों में सुनाया: —

परमानंद चौथो सुख भारो । यह सुख ताहू से अधिकारो ॥

—लीलासागर पृष्ठ ३२२

उपरोक्त प्रसंग से यह पूर्णतया सिद्ध हो जाता है कि श्री चरणदास जी महाराज तथा उनके शिष्य वर्ग ने योग और ज्ञान की पूर्ण स्थिति भी प्राप्त की परंतु श्री कृष्णलीलामृत का दिव्य आनन्द सम्पूर्ण आनन्दों से परमोत्कृष्ट माना है ।

श्री जोगजीत जी महाराज ने समय समय पर अनेक सिद्धियां दिखाई परन्तु उनको सद्गुरु कृपा से ही हुई मानी, उनमें अपना कर्तृत्वाभिमान तनिक भी नहीं था; यह आपकी दैन्य भावना अत्यन्त सराहनीय है । आपके कुछ चरित्र जो स्वयं ने श्री लीला सागर के अन्तिम भाग में लिखे हैं वे इस प्रकार हैं:—

(१) मितरौल गांव में एक पड़िया (भैंस की बच्ची) को आपने सन्तों का सीत प्रसाद खिलाकर जीवित कर दी ।

(२) झाझर गांव में गुलाबराय के पुत्र बिद्धि की धर्मपत्नी के बालिका ने जन्म लिया था उसको आपने बालक बना दिया ।

(३) थोराग्राम में रज्जा नामक वणिक के २ वर्ष का बालक सूखा रोग से मर गया था, उसको जीवित करने के लिये आपने श्री चरणदासजी महाराज से प्रार्थना की । उन्होंने प्रगट होकर चरणामृत देने की आज्ञा प्रदान की, जिसको पिलाते ही लड़का जीवित होगया ।

(४) जलालाबाद में मल्लू नामक वणिक के चार पुत्र थे। उनमें से तीन बड़े गुरुनिष्ठ, हरिभक्ति परायण थे पर चौथा जयकरण नाम का व्यभिचारी था। एक समय श्री त्यागीरामजी, मस्तरामजी और सुखविलासजी सहित रामत करते हुए आप इनके घर पधारे। जयकरण ने इन सन्तों से विरोध करके गाँव से चले जाने को कहा। उसही रात्रि को स्वामी श्री चरणदासजी महाराज ने प्रगट होकर जयकरण को खाट पर ऐसा जकड़ कर बाँध दिया कि वह हिलडुल भी न सका और गुप्ती से उसे भयभीत करके कहा कि तुमने सन्तों को क्यों सताया और भजन करने वाले अपने भाइयों से विरोध क्यों करते हो? तुमको इस अवस्था से सिवाय जोगजीत के कोई नहीं छुड़ा सकता, तुम उनकी ही चरण शरण ग्रहण करो। जयकरण हाय हाय करने लगा और अपने कुटुम्बियों को बुलाकर कहने लगा कि मुझे श्री महाराज मारते हैं। आप लोग शीघ्र ही श्री जोगजीत जी महाराज को बुलाकर लाओ। श्री जोगजीतजी की चरणशरण होकर वह बड़ा हरिभक्त हो गया। इस प्रकार संत महापुरुष दुराचारी दुष्टों के अपकार करने पर भी उनके प्रति उपकार ही करते हैं।

एक बार श्री जोगजीतजी ने कार्तिक मास भर गढ़ मुक्तेश्वर में श्री गंगा स्नान किया और वहाँ से श्री सद्गुरु चरणों के दर्शनार्थ दिल्ली पधारे तथा श्री महाराज के वचनामृत पान कर परमानंद प्राप्त किया। इसी समय श्री महाराज ने स्वयं पूछा कि तुमने खुर्जा में नवीन स्थल बनाया है उसे देखने के लिये हम चैत्र मास में आवेंगे। फिर श्री महाराज खुर्जा पधारे और आठ दिनतक विराजे। एक दिन अर्ध रात्रि के समय श्री चरणदासजी महाराज तथा श्री जोगजीतजी दोनों ही विराजमान थे, उस समय श्री महाराज को ध्यान में आगम दीखा और वे करुणा से भर कर

मारी रुदन करने लगे । तब श्री जोगजीत जी ने प्रार्थना की कि प्रभो यह क्या लीला धारी है ? श्री महाराज ने उत्तर दिया कि एक वर्ष पीछे महान् दुष्काल पड़ेगा और अपार जीव अन्न के अभाव से दु:खी होकर मरेंगे । मैंने तीन बार प्रभु से इस दुष्काल के निवारणार्थ प्रार्थना की परंतु प्रभू ने आज्ञा की कि पृथ्वी पर बहुत पाप बढ़ गया है इसलिये अब ऐसा ही होगा§ । तुम भी हमारे धाम में आ जाओगे जिससे अकाल पीड़ित संसारियों का दुख देखने का अवसर न आवेगा, और श्री महाराज ने निम्न प्रकार आज्ञा की:—

'लगते अगहन निश्चय जानो । त्यागें तन दिल्ली अस्थानो ॥
सो यह दिल ही माँहि रखइये । काहू को मत नाहिं सुनइये ॥
मैं भापी संग चलूँ तिहारे । कही बहुरि सुन मेरे प्यारे ॥
जो तोको संग ले चलूँ, घिरे रहें सब सन्त ।
यह वाचा तो सों करी, मिलैं अंत के तन्त ॥

—लीलासागर पृष्ठ ३४०

जब श्री महाराज शरीर परित्याग करने के लिये दिल्ली में आसन पर विराजे हुए थे और समाधिस्थ हो रहे थे तो एक पहर रात्रि शेष रहने पर योगशक्ति से खुर्जा स्थान पर पधार कर श्री जोगजीत जी को साक्षात् दर्शन दिये उस समय का वृतान्त श्री लीलासागर में निम्न शब्दों में लिखा है:—

§इससे पूर्व कई बार समर्थ श्री महाराजने प्रभु से प्रार्थना करके दुष्काल निवारण करा दिये थे ।

पहर रात जब रही बचायो। खुरजे आ मोहि सोवत जगायो ॥
भरभराय मैं उठ्यो जगाई । दरशे महाराज सुखदाई ॥
पलँग बिठाय परिक्रमा दीनी । साष्टांग दंडोतैं कीनी ॥
चरण छुवा दोउ नैन सिराये। चरणामृत ले मन हरषाये ॥
बाँह पकड़ मोहि कण्ठ लगाये। पूरे वचन करन कहि आये ॥
अब वसि हैं जा पद निर्वाने। तन छाँडें दिल्ली अस्थाने ॥

दोहा- निज स्वरूप से अब मिलें, या तन सेती नाहिं ।
रहियो बहु आनन्द सों, शुकदेव चरणन छाँहिं ॥
तुरत तनिक मो पलक झपानी। महाराज भये अन्तर्ध्यानी ॥
—लीलासागर पृष्ठ ३४५

इस चरित्र से प्रतीत होता है कि श्री महाराज का श्री जोगजीतजी से अत्यन्त स्नेह और वात्सल्य रहा कि इनको अंतिम दर्शन देकर परमपद में पधारे।

श्री जोगजीत जी महाराज ने कुरुक्षेत्र और खुर्जा में,दो गद्दियाँ स्थापित कीं। कुरुक्षेत्र का बड़ा थांमा (स्थान) था जो अनेक थांमों का नियंत्रण करता था। इसके नीचे सवाद, अमराड़ा, शाहजहांपुर और जगाधरी के थांमे कार्य करते थे।

दिल्ली छोड़ने के बाद आप प्रायः खुर्जा में ही विराजते रहे। लीलासागर ग्रन्थ की रचना वि. सं० १८११ से आरंभ होकर १८१६ में पूर्ण होना इस ग्रन्थ से ही प्रकट होता है जब कि श्री महाराज चरणदासजी की अवस्था ५६ वर्ष की थी। श्री महाराज ने इस ग्रन्थ को अपने इस लोक की लीला संवरण करने के पश्चात् प्रचार करने की आज्ञा दी थी। श्री महाराज की धामयात्रा संवत्

१८३६ मार्गशीर्ष कृष्ण ७ को तुलालग्न में ब्राह्म मुहूर्त में हुई। श्री महाराज की धाम यात्रा का वृत्तान्त उनके परमपद पधारने के पीछे लिखा गया है। श्री जोगजीत जी महाराज का परमपद संभवतः वि. सं० १८५० में थानेश्वर में हुआ था जहां इनकी छतरी बनी हुई है।

श्री जोगजीत जी महाराज की गुरु निष्ठा परात्पर थी। योग में तो आप पारंगत थे ही, वैराग्य भी अति तीव्र था। आप अत्यन्त सन्त सेवा परायण रहे तथा भगवद्भक्ति में आपकी अद्भुत तल्लीनता प्रसिद्ध थी। आप एक महान् ब्रह्म ज्ञानी भी थे। आप बड़े ही काव्यमर्मज्ञ, अच्छे वक्ता, कीर्तन और गायन में पटु थे। काव्य रचना में आपकी अद्भुत गति थी। आपका प्रस्तुत ग्रन्थ केवल ऐतिहासिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि साहित्यिक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण कृति है। इसमें आपकी काव्य पटुता का अच्छा उदाहरण मिलता है। इसी तरह महाभारत जैमिनी अश्वमेध पर्व की पद्यबद्ध टीका करके भी आपने अपने संस्कृत ज्ञान तथा हिन्दी काव्य कौशल का अच्छा परिचय दिया है। आपके छुट-पुट पद भी कई संग्रहों में मिलते हैं।

विनीत
मदनमोहन तोषनीवाल
जयपुर

ग्रन्थ परिचय

श्री लीलासागर सद्गुरु निष्ठा का अद्वितीय ग्रंथ है। इसके चरित्र नायक श्री श्यामचरणदासाचार्य्य जी हैं जो श्री भरद्वाज ऋषिराज के अपरावतार हैं। इनको सद्गुरु मुनीन्द्र श्री शुकदेव ऐसे मिले जो सब विरक्तों के मौलिमणि, सर्व योगियों के शिखा-मणि, सब ज्ञानियों के सिरताज और सर्व प्रेमियों के मुकुटमणि विश्व प्रसिद्ध हैं। श्री परीक्षित महाराज के व्याज से श्रीमद्भागवत का प्राकट्य जो भागवत धर्म का सर्वोपरि उत्कृष्टतम शास्त्र, जो सारे वेदों का अनुपम महारसमय फल, परमहंसों का विमल मान सरोवर, ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानियों का निबिड़ मोह निशाध्वंसक प्रचण्ड तेजोमय मार्तण्ड और सारे प्रेमी भक्तों का अनुपम अगाध रस समुद्र है, इन ही श्री परमहंस चूड़ामणि श्री शुकदेवजी की सारे विश्व को एक अनोखी देन है। जगद्गुरु श्री कृष्ण द्वैपायन पिता; अगाध ज्ञान, भक्ति की परम निधि, पितामह श्री पराशर; गुरून के गुरुराज श्री वशिष्ठादि महर्षियों के समुदाय में "अग्रं व्यास पराशरादि महतां सिंहासने संस्थितः", इस प्रकार व्यास आसन पर विराजकर श्री परीक्षित को सप्ताह सुनाने वाले श्री मुनिराज श्री शुकदेवजी महाराज श्री चरणदास जी महाराज को गुरु मिले, उन श्री भक्तराज महाराज का दिव्य चरितामृत इस लीलासागर में लबालब भरा है।

श्री लीलासागर के चरित्रनायक का प्राकट्य विश्व मंगल के लिये परम् प्रकाश और अनहद नादों की ध्वनि से होना स्वाभाविक

है, अल्पवयस्क बालक का भगवत् स्मरण परायण और पांच वर्ष की अवस्था में श्री सद्गुरु का स्वयं श्री रणजीत को वरण करना इनके स्वरूपानुरूप ही है। सद्गुरु सरीखे ही परम विरक्त शिष्य का संसार के व्यवहार तथा विवाहादि संस्कार से नितांत अलग रहना, भगवन्नामामृत पान परायण श्री महाराज का संसार की विद्या न अध्ययन करना उचित ही था। बाल्यकाल से ही परमाराध्य सर्वेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण लीला से आकृष्ट परम् प्रेम और विरह की तरंगों से उच्छलित चित्त प्रभु की महादुरत्यया माया में कहीं नहीं फँसना इन महापुरुष के योग्य ही था। तीव्रतम भगवद्विरह से सतप्त हृदय ने जब सत्पुरुषों से यह श्रवण किया कि परम् श्रेष्ठतम सर्वेश्वर अमरलोक बिहारी लाडिलीलाल श्री राधा-कृष्ण का दर्शन सद्गुरु कृपा बिना नहीं हो सकता तो वह प्रभु प्रेम सद्गुरु प्रेम में परिणित होकर इस प्रकार सद्गुरु के मिलन की व्याकुलता की परात्पर सीमा पर पहुँच गया कि श्री महाराज ने बहुत काल तक खान पान भी छोड़ दिया और सद्गुरु के बिना मिले शरीरको गंगा में प्रवाहित करने का निश्चय कर लिया। ऐसी स्थिति जानकर सर्वज्ञ सद्गुरु महामुनीन्द्र श्री शुकदेवजी ने आपको शुकतार आने की प्रेरणा ध्यान में करके १९ वर्ष की अवस्था में चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को दीक्षा प्रदान की। इसके अनन्तर श्री महाराज ने १३ वर्ष अष्टांग योग की साधना करके योगकी परात्पर सिद्धि प्राप्त कर ली। योगसिद्धि प्राप्त करके श्री सद्गुरु की आज्ञा से पांच वर्ष तक आप शाहनशाहों की तरह राजविधि से रहे और फिर सब शाही ठाठ बाट छोड़ कर पैदल बिना पनही ही श्री वृन्दावन पधारे वहां सेवा कुंज में श्री सर्वेश्वर प्रभु श्री राधाकृष्ण के प्रत्यक्ष दर्शन करके अमरलोक अखण्ड धाम के साक्षात् दर्शन प्राप्त किये।

श्री महाराज ने नादिरशाह सरीखे उग्र स्वभाव कातिल शाहनशाह को आज्ञावर्ती बना लिया, दिल्ली के बादशाह और उनके कुटम्बी उमराव प्रायः सबही आपके भक्त हुए, उनमें से किसी किसी को तो दिल्ली की शाहनशाहत भी दी, ईश्वरीसिंह महाराजा को जयपुर की गद्दी प्रदान की। आपने पुत्रहीनों को पुत्र, धनहीनों को धन दिया, दुखियों के दुख निवारण किये और पापियों के पाप निवारण करके भगवद्‌मार्ग में प्रवृत्त कर दिया। अनेक बार प्रभु से विनय करके दुष्काल निवृत्त करा दिये। हिंसक सिंह सरीखों को स्वर्ग प्रदान कर दिया, धाड़ियों का मन बदल कर भगवद्भक्ति परायण कर दिया। हिन्दू मुसलमान तथा अन्य सब जाति वाले आपके उपदेश से लाभान्वित होते थे। आपका व्यवहार सबके साथ अत्यन्त प्रेम प्यार का था। आपके हजारों शिष्य हुए और उन्होंने चार धाम सब तीर्थ और बड़े बड़े शहरों में अपनी गद्दियाँ स्थापित करके शिष्य शाखा का प्रचार किया।

श्री चरणदास स्वामीजी महाराज का जीवन चरित्र दो परम प्रिय शिष्यों ने लिखा है। एक श्री स्वामी रामरूपजी महाराज, जिनका गुरु प्रदत्त दूसरा नाम श्री गुरुभक्तानंदजी था, यह श्री महाराज के दीवान (प्रधानमंत्री भी थे। श्री भक्ति सागर ग्रन्थ शोधन की सेवा उनहीं के अधिकार में थी और यह ग्रन्थ शिष्य सेवकों को आपके द्वारा प्राप्त होता था। इन्होंने श्री "गुरु भक्ति प्रकाश," लिखा है जो परात्पर गुरुनिष्ठा का अनुपम ग्रंथ है जिसमें श्री महाराज का दिव्य मंगलमय अति पावन चरित्र महान सरस और अत्यन्त प्रभावशाली वाणी में चित्रण किया है इसका प्रत्यक्ष अनुभव पाठ करने से तुरंत ऐसा प्रतीत होता है मानो चरित्र नायक के दिव्य कल्याण गुण पाठक के हृदय में अवतरित हो रहे हैं। श्री महाराज के अद्वितीय लोकोत्तर चरित्र के वर्णन के

अतिरिक्त श्री गुरु भक्ति प्रकाश की विशिष्टता यह है कि श्री गुरुदेव महामुनीन्द्र के साथ वंशीवट पर जो ज्ञानगोष्ठी हुई वह इस समय की भाषा का महामन्त्र कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी, क्योंकि श्री परमहंस चूड़ामणि महामुनीन्द्र श्री गुरुदेवजी के श्री मुख से कलियुग के पामर दुःखी जीवों के कल्याणार्थ जो दिव्य उपदेश श्री चरणदास स्वामीजी महाराज के व्याज से विश्वमंगल के लिये निर्णयात्मक सिद्धान्त रूप से कथन किया गया है वह अद्वितीय, अलौकिक परम् सार का सार है ।

श्री लीला सागर ग्रन्थ में श्री सद्गुरु भगवान का महामनोहर दिव्य चरित्र अति मधुर वाणी में चित्रण किया गया है । उसके साथ विशेष महान गुरुनिष्ठ चरणदासीय संत वैष्णव जो श्री महाराज के शिष्य सेवक थे उनकी महान आदर्श निष्ठा का चित्रण थोड़े शब्दों में ही अतीव अर्थ गौरव से परिपूर्ण है, जो उनके वास्तविक स्वरूप का बोधक है । श्री जोगजीतजी महाराज की रचना बड़ी सरस, अति ललित और चरित्र की सत्यता पूर्वक पूरा विवरण सहित वर्णन करने में अति प्रशंसनीय है । श्री महाराज के शिष्यों के नाम ही उनकी विशिष्ट रहनी और उनके प्रमुख स्वभाव तथा उनके उत्कृष्ट गुण विशेष के द्योतक हैं । श्री शुक सम्प्रदाय के अनुयायियों में गुरुनिष्ठा की परात्परता प्रायः सभी महापुरुषों में पाई जाती है और इससे यह प्रमाणित हो जाता है कि गुरुनिष्ठा से अतिशीघ्र भगवदीय कल्याणगुण ध्यानपरायण शिष्य में पूर्ण रूप से अवतरित हो जाते हैं कि जिससे वह थोड़े काल के साधन से ही संत गुणों को प्राप्त करके भगवद् साधर्म्यता का अधिकारी हो जाता है ।

लीलासागर एक सच्चे सद्गुरु के सच्चे शिष्य द्वारा वर्णित परम् प्रियतम से मिलने की सच्ची कहानी है और जो आचरण

महापुरुषों द्वारा किया गया है वह ही "महाजनो येन गतः स पन्था," परमार्थ पथिक के लिये वास्तविक गन्तव्य मार्ग है। लीलासागर के चरित्र नायक ने जितने भी भगवान से मिलने के सीधे सच्चे मार्ग हैं उनका स्वयं अनुसरण किया और दूसरों के लिये "भक्तिसागर" ग्रन्थ रूप नौका छोड़ गये जिसमें बैठकर जीव भवसागर से निःसन्देह पार होकर परम् प्रेमास्पद से मिलकर परमानंद, प्रेमानन्द का निरवधिक आनन्द प्राप्त कर लेता है। यद्यपि श्री महाराज ने कर्म, योग, ज्ञान और भक्ति के सभी मार्गों का अनुभव किया और पात्र भेद से जिसकी जैसी रुचि थी उसको उसही मार्ग में लगा दिया परंतु श्री महाराज ने भक्ति को सर्वोत्कृष्ट स्थान दिया और इस ही लिये आप भक्तराज कहलाये। श्री महाराज के १०८ नाम माला श्री स्वामी रामरूपजी महाराज ने लिखी है उसी तरह श्री जोगजीतजी ने भी लिखी है परतु आपके यह चार नाम अति प्रसिद्ध हैः—

श्री चरणदास रणजीत जी, भक्तराज महाराज।
चतुर नाम प्रसिद्ध हैं, जनके सारत काज॥

श्री भविष्य पुराणान्तर्गत श्री महादेव पार्वती सम्वाद रूप में श्री चरणदास स्वामी जी महाराज की १०८ नाम माला को भी यहाँ पर प्रकाशित किया जा रहा है .जिससे श्री महाराज का श्री भरद्वाज ऋषिराज के अवतार होना प्रमाणित है।

पार्वत्युवाचः— भगवन् सर्व मंत्रज्ञ लोकनाथ जगत्पते ।
चरणदासस्तयं मंत्रं कथयस्व प्रसादतः ॥ १ ॥

श्री महादेव उवाचः—धन्यासि कृतपुण्यासि पार्वति प्राणवल्लभे ।
अकथं परमार्थेन तथापि कथयामि ते ॥ २ ॥

विंशत्यक्षरमंत्रोयं सर्वकामार्थसिद्धिदः ।
शठाय परिशिष्याय कदाचिन्न प्रकाशयेत् ॥ ३ ॥

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य रमाबीजं ततः परम् ।
चरणदासाय वै पश्चात् भरद्वाजाय वै पुनः ॥ ४ ॥

नमो नमः रमा माया कामं च प्रणवं पुनः ।
विंशत्यक्षरमंत्रोयं सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥ ५ ॥

॥ अथ नामानि ॥

ॐ हरिर्हरो गुरु स्वामी, श्रीनाथो देव अच्युतः ।
करुणानिधिर्दीनार्तपरित्राणपरायणः ॥ ६ ॥

भवाम्बुधौ निमग्नानां, त्राता उद्धारणक्षमः ।
सर्वदर्शी विमुक्तात्मा, रणजीतो महाबलः ॥ ७ ॥

अक्षोभ्यो शाश्वतो वंद्यो, चरणदासो सुरारिहा ।
मुरलीधरप्राणप्रियो, धाता सर्वज्ञ शांतिकृत् ॥ ८ ॥

तेज ओजो द्युति धरः, प्रकाशात्मा सतां गतिः ।
पावनः पवमानश्च, कुञ्जमत्योदरोद्भवः ॥ ९ ॥

पूर्णचंद्रो तथा सूर्यो, कालानलसमप्रभः ।
अणुर्बृहत कृशःस्थूलो, आश्रितानां वरप्रदः ॥१०॥

श्वेतो रक्तो तथा पीतो, हरितो नील लोहितः ।
कांतिदो श्रीप्रदो नित्यो, जयदो भूरिदक्षिरगः ॥११॥
ब्रह्मण्यो वीतरागश्च, वेदगम्यो पुरातनः ।
सिद्धान्तरूपो आचार्यो, प्राणः सर्वेश्वरस्तथा ।.१२॥
अपुत्राणां पुत्रदाता, निर्धनानां धनप्रदः ।
बंधमुक्तिप्रदश्चैव, रंकान् साम्राज्य दायकः ॥१३॥
पाषंडधर्मलोप्ता च, वेदमार्गप्रवर्तकः ।
केवलानुभवानंदस्वरूपः, सर्वदृक् स्वयम् ॥१४॥
महर्षिः कपिलो व्यासो, श्री शुको देवलोसितः ।
रामः परशुरामश्च, बलरामो महाबलः ॥१५॥
विश्रुतो श्रुतिरूपश्च, अनन्तोनंतशक्ति धृक् ।
सुरर्चिर्यज्ञभोक्ता च, यज्ञांगो यज्ञकर्मकृत् ॥१६॥
भरवो भूतनाथश्च, भूतात्मा भूतभावनः ।
सर्वगम्यो दुराधर्षो, कालात्मा कालनिश्चकः ॥१७॥
हनुमत्प्रवरो वीरो, मंत्रतंत्रार्थतत्वविन् ।
नारायणः सुरानंदो, गोविंदो गरुडध्वजः ॥१८॥
नारसिंहो महारुद्रो, प्रह्लादो भक्तवत्सलः ।
धन्वन्तरिस्तथा चैव, नामान्यष्टोतरं शतं ॥१९॥
य इदं कीर्तयेन्मर्त्यः, ऋषिमालां महात्मनां ।
न तस्य दुर्लभं किंचित् इह लोके परत्र च ॥२०॥
वेदांतगो ब्राह्मणः स्यात्, क्षत्रियो विजयीभवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्यात्, शूद्रःसुखमवाप्नुयात् ॥२१॥
अष्टोत्तरशतं चैव, दिनानामेकविंशतिः ।
पठित्वा प्राप्नुयात्कामं, सत्यं सत्यं वचो मम ॥२२॥

इति श्री भविष्यपुराणे शिवपार्वती संवादे श्री श्यामचरणदास-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ।

महाभागवत परम रसिक श्रीयुत पं० शिवदयाल जी महाराज (हरि सम्बन्धी नाम श्री सरस माधुरी शरण जी महाराज) ने श्री स्वामी चरणदासजी महाराज के सम्बन्ध में सरससागर प्रथम भाग में सैकड़ों पद, कवित्त, दोहे छंद आदि की अति ललित व प्रभावशाली भाषामें रचना की है। पाठकों से विनय है कि उनको *अवश्य पठन एवं मनन करें, जिससे श्री स्वामी श्यामचरणदासा*-चार्य जी महाराज की कृपा प्राप्त हो।

प्रस्तुत लीलासागर ग्रंथ चतुर्मुखी दीपक के समान योग, ज्ञान, वैराग्य और भक्ति को प्रकाश देने वाला है।

मेरा विश्वास है कि इस ग्रंथ के अध्ययन, मनन और आचरण से पाठकों में गुरु निष्ठा एवं भगवदीय कल्याण गुण शीघ्र ही अवतरित होंगे और सांसारिक वासनाओं का अंत होकर परम फलरूप प्रभु प्रेम की गंगा लहराने लगेगी जिसके लिये श्री चरणदासजी महाराज स्वयं आज्ञा करते हैं–

जो प्रेम तनक चित आवै, वह औगुण सबै नशावै ।
प्रेम लता जब लहरै, मन बिना योग ही ठहरै ।।
सकल शिरोमणि प्रेम हि जानो, चरणदास निहचै मन आनो ।।

दो० प्रेम छुड़ावै जगत सूं, प्रेम मिलावे राम ।
प्रेम करै गति और ही, लै पहुँचे हरिधाम ।।

—भक्ति सागर पृष्ठ १८२

विनीत
भगवद्दासानुदास
मदन मोहन तोपनीवाल

दो शब्द

यह ग्रन्थ अपने आप में रस पूरित कलश सदृश्य सुपूर्ण है।

वर्ण्य विषय

यह ग्रन्थ परमाचार्य भरद्वाज मुनि के अवतार भूत श्री श्यामचरणदासाचार्य जी महाराज का जीवन चरित्र है। इसी ग्रन्थ से यह सिद्ध है कि श्री श्याम चरणदासाचार्य जी भगवान श्री नन्दनन्दन राधावर श्री गोप किशोर के गोपी भावापन्न अनन्य भक्त एवं उपासक थे तथा अपने काल के एक महापुरुष थे।

प्रायः सभी महापुरुषों के जीवन में कर्म, ज्ञान एवं उपासना का सामञ्जस्य देखने में आता है तथा इन तीनों का प्रतिफल है, भगवान श्री नित्य रासेश्वर एवम् नित्य रासेश्वरी श्री नन्दकिशोर तथा श्री वृषभानु किशोरी के कोमल चरणों में परम प्रेमकी परमोपलब्धि। इस ग्रन्थ में भी इन तीनों कर्म, ज्ञान एवम् उपासना का रूप खूब निखर कर सामने आया है। इसके आदि अन्त तथा मध्य में प्रायः इन्हीं का सामञ्जस्य है इसके अतिरिक्त ग्रंथ का मुख्य विषय "पूर्ण प्रेमोपलब्धि" है। भक्ति तत्व का लक्षण करते हुए श्री नारद जी अपने ग्रन्थ भक्ति सूत्र में लिखते हैं, "तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलता," इस सूत्र का पूरा अर्थ ग्रन्थकार ने श्री श्याम चरणदासाचार्य जी के जीवन में

दिखाया है। पूर्वानुराग तो महापुरुष के जीवन में पूर्व जन्म के संस्कार से बाल्यकाल में ही आ जाता है। पूर्व जन्म में ये श्री *भरद्वाज मुनि के रूप में थे। श्री भरद्वाज जी की प्रेमासक्ति का* वर्णन श्री वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड में तथा श्री महाभारत मे अनेक स्थानों पर आया है। अतः ये इस मानव शरीर से भी उसी पूर्वानुभूत अतिमानव भोग को ही भोगना चाहते थे। अतः आपकी प्रथमानुरक्ति तो स्वत. सिद्ध है। यही कारण है कि आप बाल्यकाल से ही ईश्वरानुरक्त देखने में आते हैं।

क्रमिक विकासानुगत वही पूर्वानुराग ही पूर्णानुरक्ति के रूप में (महाभाव में) परिणित हो जाता है। उपासक में स्वभावानुरूप सद्भावोपपत्ति हो जाती है, अर्थात् *उपासक अपनी उपासना एवम्* अधिकारिता के अनुसार तद्रूप में परिणित हो जाता है। इसी संद्धान्तिक नियम के अनुसार श्री चरणदास जी महाराज भी अन्तत. *गोपी* के रूप में परिणित हो जाते है; इसी को पूर्णानुरक्ति या महाभाव या सायुज्य कहते हैं। लेखक इन सभी भावों के समंकन में पूर्ण सफल है।

इस ग्रन्थ में एक खास विशेषता यह है कि इसके लेखक श्री योगजीत (जोगजीत) जी श्री श्यामचरणदासाचार्य जी द्वारा क्रीडित *समस्त लीलाओं के प्रत्यक्ष द्रष्टा थे; यही कारण है कि इस ग्रन्थ* की ये लीलाएँ पाठक को पढ़ते समय मुग्ध कर देती हैं। कहीं कहीं तो लीलाएँ इतनी सजीव हैं कि पाठक के मन में अपने ही साथ घटती सी प्रतीत होती हैं। लेखक अपने वर्ण्य विषय में पूर्ण

भाषा शैली

ग्रन्थ की भाषा भी एक मँजी हुई प्रांञ्जल भाषा है। यद्यपि ग्रन्थ की अवधी मिश्रित खड़ी बोली है तथापि कहीं कहीं बृजभाषा का खूब समावेश है। कविता के निर्माण में लेखक श्री घ्यानेश्वर जी सिद्ध हस्त हैं अतः कविता प्रायः प्रसाद गुण से युक्त है। पढ़ने में पाठक बिना मस्तिष्क का व्यायाम किए ही बड़ी सरलता से समझ सकता है। कला की दृष्टि से भी अनेक स्थलों पर उपमा, अनुप्रास आदि का अच्छा समंकन हुआ है।

लोकोपकार

प्रत्येक महापुरुष के जीवन की यह विशेषता होती है कि महापुरुष कहते कम हैं तथा करते अधिक हैं। उन्हें जो कुछ कहना होता है उसे करके बताते हैं इसलिए महापुरुष की प्रत्येक क्रिया में लोकोपकार निहित रहता है। इसी तरह इस श्री श्यामचरणदासाचार्यजी की जीवनी में भी देखने में आता है। प्रायः सभी शास्त्रकारों का मत है कि भगवत प्राप्ति में ही जीवमात्र का परम कल्याण निहित है। इस दृष्टि से जब हम विचार करते हैं तब श्री चरणदासजी महाराज का समस्त जीवन ही एक साधन के रूप में सामने आता है, जिसे जीवन में उतारकर श्री सद्गुरु भगवान की कृपा प्राप्त करके कोई भी जीव परमानन्दाकर भगवान श्री निकुञ्जेश्वर श्री श्यामसुन्दर को प्राप्त कर अपना कल्याण कर सकता है।

आवश्यकता

संसार में सदा ही एक महापुरुष की *आवश्यकता प्रतीत* है। परन्तु महापुरुष सदा नहीं मिलते । उनके

लीलाएँ तथा उनकी जीवनियाँ ही संसार को उद्बोधित करती रहती हैं। इसीलिए अनेक महापुरुषों ने अपने हाथों अपनी प्रेरणात्मक जीवनियाँ लिखकर संसार को दी हैं, जिनके माध्यम से आज भी साधक प्रेरणा लेते रहते हैं। आज जबकि संसार विज्ञान के चकाचौंध में पड़कर अपनी विवेकमय ईश्वरीय बुद्धि एवम् आँख को गँवाता जारहा है, ऐसे अति भयानक काल मे धार्मिक जगत के लिए ऐसे ही महापुरुषों की जीवनियाँ अति आवश्यक हैं । इन सभी दृष्टियों से यह ग्रन्थ मानव जीवनोपयोगी है। ऐसे सद्ग्रन्थों के प्रकाशन की सतत् आवश्यकता रहती है, अतः इसके प्रकाशन निमित्त प्रकाशक भी सहस्रों बार धन्यवाद के पात्र हैं।

स्वामी रामबालकाचार्य
वेदान्ताचार्य
मोहन वाटिका—ज्ञान गुदरी,
श्री वृन्दावन

—शुद्धाशुद्धि पत्र—

पृष्ठ संख्या	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
ख	६	मुरलीधर	श्री मुरलीधर
,,	११	रणजोत	श्री रणजोत
२	२	सत	सत
२६	१	तम	तमी
२७	६	निश्चम	निश्चय
५३	१५	मिजवा	मिजवावें
६५	६	—	वंष्णव
,,	८	त	ता
११२	,,	मान	मानें
१३५	२	महीन	महोना
१५१	११	रोन	रोक न
१५२	११	मु	मुष
१७५	६	जऊँ	जाऊँ
२५७	१०	बखोना	बखानों
२६५	६	स	सब
२७१	१३	न	दर्शन
२७४	३	नानो	नान्हो
२७६	१७	पर	परचा
२८४	१८	स	सो
२६१	१३	—	ताको
२६८	१३	सतन	संतन
३०२	३	प्रना	प्राना
३२४	७	चेत न	चेतन
३४१	८	करा	करो

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

पृष्ठ संख्या

पृष्ठ संख्या

पृष्ठ संख्या

श्री लीलासागर

अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री चरणदासाचार्य

प्रकाशक :—श्री गुरु चरणदासीय साहित्य ट्रस्ट, जयपुर

॥ श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः ॥

श्री शुकदेवाय नमः ॥ श्री सद्गुरु चरणदासाय नमः ॥

(श्री सद्गुरु चरणदासजी के दास ध्यानेश्वर जोगजीत जी कृत "लीला सागर" ग्रन्थ लिख्यते।)

॥ दोहा ॥

संतन को जस कहत हूं, प्रथम मंगलाचरण।
उनहीं को दण्डोत है, जन्म मरण दुख हरण ॥१॥

तिमिर भजावन ज्ञान दे, हिये चांदना होय।
जोगजीत यों कहत है, डारें दुविधा खोय ॥२॥

सुखदाई सब जीव के, आतम पूजा नित्त।
दया शील धारे रहें, जिनके शीतल चित्त ॥३॥

मन जीते लक्षण लिये, धारें धर्म स्वरूप।
प्रेमी अति निष्काम ही, अनन्यभक्ति के रूप ॥४॥

संतन की महिमा बड़ी, इस्तुति कही न जाय।
परमेश्वर निरलेप कूं, वश करि लियो रिझाय ॥५॥

संतन की इस्तुति किये, हरि की इस्तुति होय।
जोग जीत यों कहत है, वस्तु एक तन दोय ॥६॥

भक्त और भगवंत में, कछु भेद मत जान ।
निरगुन अविनाशी सोई, सरगुन सत सुजान ॥७॥

संतन ही के मिलन सूं, फल होय भाँति अनेक ।
गुरु दृढता आवे हिये, वचन सुने जो तेक ॥८॥

प्रेम मगन इक संत ही, आये मो अस्थान ।
इस्तुति करि हिय ले मिले, बैठारे सुखदान ॥९॥

॥ चौपाई ॥

संवत् ठारहसौ अरु ग्यारे । कृपा अधिक करी करतारे ॥
कातिक सुदी जु पूरणमासी । परवी गंगा अधिक हुलासी ॥
मो तन निरख जे मृदु मुसकाये । चरचा में तिन्ह बैन सुनाये ॥
तुम्हरे सतगुरु जे गुरु भाई । अनभै बानी बहुत बनाई ॥
पोथी औरों शब्द रचे हैं । पांचों अंग ता मांहि सचे हैं ॥
भक्ति जोग बैराग अरु ज्ञाना । औरों बरनों प्रेम प्रधाना ॥
तुम हूं गुणवाद कछु गाये । बाणी अरु पद कहा बनाये ॥
मैं जब ऐसो उत्तर दीन्हा । गुरु ने किया सो हम ही कीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

गुरु की बानी शीस पर, नितही करूँ जो पाठ ।
तीन काण्ड तामें भरे, कौन वस्तु की घाट ॥१०॥

॥ चौपाई ॥

गुरु ही की बानी को गाऊं। अपनी उक्ति न मन ठहराऊं॥
जैसा गंग प्रवाह जु डीठा। निरमल गहरा नीर सुमीठा॥
ताकूं तजि अरु कूप खुदाऊं। तौ मूरख मतिमंद कहाऊं॥
तन थिर रहे तो सब कुछ कीजे। जग में मान बडाई लीजे॥
जिन जिन कियो नाम के काजा। पच पच मरे रंक अरू राजा॥
तासूं उपजे राजस भारी। गर्व बढे जा नरक मंझारी॥
मैं तन मन गुरु ही को दीन्हा। चरण दास को ईश्वर चीन्हा॥
हरि गुरु संत कृपा यह कीजै। सकल कामना मनकी छीजै॥

॥ दोहा ॥

सुनि यों साधु होय मुदित, निहुर करी परनाम।
जोगजीत कहि धन्य तुम, हो अति ही निहकाम॥११॥
साधु विदा हुइ करि चले, मैं जु करी दण्डोत।
पाछे सिंधु विचार में, सहज लगायो गोत॥१२॥

॥ चौपाई ॥

यही वासना मन में आई। मैं हरिके गुण कछू न गाई॥
जो पे गुणावाद प्रभु गाऊं। अति अगाध कछु अंत न पाऊं॥
ब्रह्मा वेद न गुण गति पावें। गाय जो नारद शेश थकावें॥
शंकर से कर ध्यान थकावें। हरि गुण शक्ति कला नहिं जाने॥

सुर गणेश अरु शारद रानी । विद्यावान बड़े परधानी ॥
करि विचार मन रहे थकाई । गुण गिनती उनहूं नहिं पाई ॥
भूमि रेणुका जो गिन जावे । प्रभु गुण अंत सो भी नहिं पावे ॥
तुच्छ मनुष बुधि कहा बखाने । बड़े कवीश्वर वरणि थकाने ॥

॥ दोहा ॥

ब्रह्मा शेष महेश हू, देव ऋषी मुनि जानि ।
किनहुँ पार पायो नहीं, बहु थकि रहे बखानि ॥१३॥

॥ चौपाई ॥

अष्टादस षट चार बनाये । तामें गुणावाद ही गाये ॥
प्राकृत अरु संस्कृत जो भाखा । सब में गुणावाद ही राखा ॥
अपनी अपनी बुद्धि प्रमाना । गुणावाद जो किये बखाना ॥
सब मुनि संत महंत यहि गाया । राम रिझावन सतगुरु दाया ॥
हो निश्चल मन कीन्ह उपाऊ । गुण चरित्र सत गुरु के गाऊं ॥
परफुल्लित हो यह ठहराई । निहचे यही रीति मन माई ॥
गुरु को ध्यान हिये मधि राखूं । गुरु के गुण बिन और न भाखूं ॥
गुरु इस्तुति बिन आन उचारे । तो जिभ्या तोहि है धिक्कारे ॥
मन बच कर्म करूं गुरु पूजा । ज्ञान ध्यान गुरु बिन नहिं दूजा ॥
यह सिर नवे तो गुरु के चरना । आन उपाय न चित में धरना ॥

॥ दोहा ॥

यही समझ स्थिर भई, गुरु बिन भजूँ न और ।
जोगजीत के हिये में, ठहरी बात किरोर ॥१४॥

(इति श्री गुरु दृढता को अंग –प्रथमो विश्रामः)

✻ अथ शोभन जी की भक्ति वर्णते ✻

॥ चौपाई ॥

परथम सुमिरूँ व्यास मुनीश्वर । अपनों हस्त कमल मो शिर धर॥
मैं तो निश दिन दास तिहारा । मेरे घट में करो उजियारा ॥
तिमिर अविद्या सब ही खोवो । ज्ञान नीर मम हिरदा धोवो ॥
उज्वल हो गुरु के जस गाऊं । बार बार पद शीस नवाऊं ॥
करूं प्रणाम श्री शुक देवा । सुख दानी तुम चरणन सेवा ॥
हो दयालु मो ओर निहारो । कुबुधि भरमता सकल निवारो ॥
मांगूँ दान यही मोहि दीजे । गुरु दृढ भक्ति मांहि मन भीजे ॥
दीन होय गुरुमहिमा गाऊं । करो अनुग्रह यह वर पाऊं ॥

॥ दोहा ॥

चरणदास के चरण पर, जोगजीत बलिजाय ।
भक्तियोग अरु ज्ञान सों, दीनों मोहि अघाय ॥१॥

॥ छप्पय ॥

नारायण की नाभि कमल सों ब्रह्मा उपजे ।
विधि के मुनि वशिष्ठ, पाराशर तिनके निपजे ॥
उनके वेदहि व्यास, व्यास के सुत शुकदेवा ।
शुकदेव कीन्हे शिष्य, चरन ही दास अभेवा ॥
जोगजीत भयो दास, तिन चरण कमल शिर नायके ॥
जन्म कर्म लीला भने, मन वच कर्म चित लायके ॥

॥ चौपाई ॥

गोविन्द राय को सुत मो जानों । इन्द्रप्रस्थ मो जनम पिछानों ॥
हरी दास था नांव नवीनो । जोग जीत सतगुरु कह दीनों ॥
जिनको जनम चरित्तर गावे । अद्भुत लीला वरण सुनावे ॥
जो मोहि बैठि कहें हिय माहीं । उन बिन मोसों हो कछु नाहीं ॥
अपना भेद कहें जो वोही । मो मुख रसना बरने सोई ॥
कहुं अष्टम परनाली सेती । सुनियो साधो सब कर हेती ॥
नाम जो याको लीलासागर । गुरुमुखियन को प्रेम उजागर ॥
कहूं प्रनाली सतगुरु केरी । पढ़े सुने हो मुक्ति सुचेरी ॥

॥ दोहा ॥

है मेवात में नगर ही, अलवर जाको नाम ।
डहरा ताके निकट ही, शोभन बसें सुधाम ॥

॥ चौपाई ॥

अब डहरे की शोभा भाखूं । ताको ध्यान हृदय में राखूं ॥
आस पास ताके चहुं ओरा । बाग बगीचे कुहके मोरा ॥
फूले फले जो द्रुम सुहाये । खग मृग मनुपन के सुखदाये ॥
सरिता वहत सु ताके धोरे । निरमल नीर जु लेत भकोरे ॥
चार बरण जहां सुखी पिछानों । राणा सकल शिरोमणि जानों ॥
रहें मगन कोइ बैरी नांहीं । धारे तेज बसे वा ठांही ॥
जित शोभन के मंदिर राजैं । ताल पखावज नित ही बाजैं ॥
भक्ति पैठ जित लागी रहें । सब सत संगत जै जै कहैं ॥

॥ दोहा ॥

शोभन डूसर कुल विषै, गृहस्थ आश्रम माँहि ।
रहे कुटुम्ब के बीच में, लिप्त जो क्यों ही नांहि ॥

॥ चौपाई ॥

जो कोइ साध संत घर आवे । दे परकम्मा शीस नवावे ॥
चरण धोय चरणामृत लेवें । मन वच करम जु हरिजन सेवें ॥
अप सों पहले साध जिमावें । सीत बिना भोजन नहि पावें ॥
चरण पलौटें पंखा ढोरें । सेवा सेती मुख नहिं मोरें ॥
विदा होय पहुंचावन जावें । बिछुरे नैंन नीर पुलकावें ॥
कहें एक फिर किरपा कीजौ । दास जान वेगी सुधि लीजौ ॥

कथा कीरतन नित ही राखें। नवधा भक्ति प्रेम रस चाखें॥
निशि को ध्यान करे चितलावें। इत उत को मन नहीं डुलावें॥
भोर भये पूजा विस्तारें। दासा तन होय आपा वारें॥
रसना नाम रहे लौ लागी। अनन्य भक्ति हरिसों मति पागी॥

॥ दोहा ॥

करते या विधि भक्ति ही, उपज्यो प्रेम अपार।
नेम छुटे प्रभु सौं जुटे रही न देह संभार॥

॥ चौपाई ॥

शोभन जी की यह गति भई। देहसंभार तनिक नहि रही॥
कबहूं रोय उठैं फिर हरषें। नैन मूंद हरि छवि ही निरखें॥
कबहूं हँस हँस निरतन लागे। कबहूं गाय प्रेम रस पागे॥
कबहूं बैठे होय उदासा। कबहूँ मौन गहैं ही दासा॥
कबहूं बोलें अक बक बानी। काहू पै नहिं जाय पिछानी॥
कबहूं बन ही को उठि जावें। मन मानें जब ही घर आवें॥
भये बावरे जग जन कहि हैं। पै तिनको कोइ मर्म न लहिहैं॥
कबहूं देह विसरजन होही। सुबकी ले ले रोवत सोही॥

॥ दोहा ॥

तन सौं दीखै जगत में, मन सौं हरि के पास।
जोगजीव पहिचानियो, ऐसे शोभनदास॥

॥ चौपाई ॥

एक दिवस गये बाग मंझारे। लगे ध्यान में वा दिन सारे ॥
मन सों कंचन महल बनायो। रतन जटित नीको बनि आयो ॥
सिंहासन ता मांहि सजायो। अद्भुत पट वा मध्य बिछायो ॥
धर्‍यो गेंदवा तकिया नीके। सखी भाव जहां आप हुई के ॥
कृष्ण सांवरे राधा गौरी। जित पधराई सुन्दर जोरी ॥
सो ही बैठि निहारन लागे। वा छवि ही के मांही पागे ॥
आपा भूले तन सुधि नांही। आठ पहर बीते वा ठांही ॥
प्रभु वा प्रीत घनी दरसाई। दरशन देवे की मन आई ॥

॥ दोहा ॥

प्रत्यच्छ होय हिलाय तन, शोभन खोले नैन।
परमानन्द स्वरूप लखि, रोम रोम भयो चैन ॥

॥ चौपाई ॥

उठि शोभन कर जोरि सु धायो। दे परिक्रमा चरन परायो ॥
आपस में दोऊ मुसकाये। पकरि भुजा हरि हिय सों लाये ॥
शोभन ठाढे होकर सोई। स्तुति करि कर जोरे त्योंही ॥
हरिजी वाहि जु गहि बैठाये। कहि मुख तेरी प्रीति रिझाये ॥
परस परस व्है वचन सुनाये। परमानंद सुख शोभन छाये ॥
कहि प्रभु वर मांगो हितकारे। जो हिय इच्छा होय तिहारे ॥

शोभन कही कि अब क्या चहिये । सकल मनोरथ पूरन लहिये ॥
हरि जी बहुरि कही कुछ भाखो । सांच नेह में भेद न राखो ॥

॥ दोहा ॥

शोभन सुन कर जोरि के, वर मांग्यो तब येहि ।
मेरे कुल में भक्ति ही, सदा रहे यह देहि ॥

॥ चौपाई ॥

प्रसन्न होहि बोले गोपाला । भक्ति दई कुल कियो निहाला ॥
तो कुल मांही भक्ति चलेगी । अठवीं पीढ़ी जाय फलेगी ॥
लेऊँ अंश अवतार जहां ही । भक्त रूप धर आऊँ यहां ही ॥
भवन तिहारे में ही आऊँ । कलियुग मांही भक्ति चलाऊँ ॥
हित के वचन कहे हरि सबही । अंतरधान भये प्रभु तब ही ॥
शोभन व्याकुल होकर व्हाँहीं । गिरे धरनि पर तन सुधि नाहीं ॥
चेतन होय अप मंदिर आये । निज संतन सों वचन सुनाये ॥
वाही दिन सों अन्न जल त्यागा । हरि के रूप मांहि जिये पागा ॥

॥ दोहा ॥

नैन मूंद खोले नहीं, देखा ना संसार ।
सप्त दिवस रहि ला मिले, तन को जग में डार

॥ चौपाई ॥

चतुरदास तिनही के पाछे । प्रेमा भक्ति करी उन आछे ॥
जिनके सुत गिरधर ही दासा । हरि गुण गाये परम हुलासा ॥
गिरधर के लाहड़ बड़भागी । नवधा भक्ति मांहि अनुरागी ॥
जगन्नाथ लाहड़ के बेटे । भक्ति भाव में रहें लपेटे ॥
जगन्नाथ के प्रागहि दासा । प्रेम भक्ति का हृदय प्रकाशा ॥
जिनके सुत मुरलीधर ज्ञानी । बालपने सों अन्तर ध्यानी ॥
रहे जगत में लेप न लागे । इन्द्रिन के रस में नहिं पागे ॥
मन जीते उन्मत्त सदाही । जिनका भय अरु भर्म भजाही ॥
उन्हें बावरा जक्त बखाने । वैसा हो सो मरम पिछाने ॥
जिनके जनम लियो महाराजा । भक्ति प्रकाशन ही के काजा ॥
वर पूरन करने को आये । शोभन को जो वचन सुनाये ॥
चारों जुग हरि भक्त पियारे । भक्त हेतु नाना तन धारे ॥

॥ दोहा ॥

भक्त बसैं हरि के हिये, भक्तों में भगवान ।
ओत प्रोत ही हो रहे, कहवे को दो जान ॥

(इति श्री भक्तवर शोभन जी को चरित्र, द्वितीयो विश्रामः)

❁ अथ श्री महाराज की जन्म लीला वर्णते ❁

॥ दोहा ॥

लीला जन्म चरित्र की, बरनत है निज दास ।
सब अंग सों परफुल्ल हो, मन में बड़ो हुलास ॥

॥ चौपाई ॥

मुरलीधर की कुंजो रानी । सर्वगुणन में अति परधानी ॥
मधुरा तन सुन्दर छवि ऐनी । मधुर वचन कहै सब सुख दैनी ॥
भागवान दोउ कुल की प्यारी । शुभ लक्षण लिये शील महारी ॥
कडुवा वचन न बोले काही । घर के मनुषों सबन सराही ॥
जानो भक्ति देह धर आई । याही कुल की करन सहाई ॥
यातें भक्ति मनुप तन धारा । मेरे गर्भ हरि ले अवतारा ॥
कुंजो गर्भ लियो प्रभु वासा । धन्य दिवस धन घड़ी हुलासा ॥
जोगजीत है दास तिहारा । जन्म सु लीला पर बलिहारा ॥

॥ दोहा ॥

आये जन का रूप धरि, लिये अंश अवतार ।
कुंजो ही के जानिये, पहिले गर्भ मंझार ॥

॥ चौपाई ॥

पहिले महिने तन महकायो । मन में अति आनन्द बढ़ायो ॥
मास दूसरे अंग पलटायो । अधिक रूप अति ही छवि छायो ॥

मास तीसरे ही के मांहीं। तन मन व्याधा रही जु नांहीं ॥
चौथे मास सगुण दरसाये। रिद्धि सिद्धि जानों घर आये ॥
पँचवे मास भया पँचमासा। चैत्र महिने बढ़ो हुलासा ॥
छठे मास महिमा भइ भारी। धन धन कहैं कुंजो नर नारी ॥
सतवें आगम ही दरसावे। भूत भविष्य वर्तमान सुभावे ॥
अठवां मास भया सुखदाई। प्रगट विभो घर में दरसाई ॥

॥ दोहा ॥

नवें मास के लगत ही, कुटुंब बढ़्यो उत्साह।
जोगजीत कुंजो हिये, हरि दरसन भइ चाह ॥

॥ चौपाई ॥

दशवें महिने भादों आया। जन्म होन की पड़ी जु छाया ॥
कुटुंब गांव सबही हुलसायो। महामगन आनन्द बढ़ायो ॥
शुभ आचरन होन पुर लागे। सकल विकल मन के सब भागे ॥
बिजरी चमकि गगन घनघोरा। जित तित बोलत दादुर मोरा ॥
उमड़े बादर झड़ी लगाई। सरिता उमग अधिक गहराई ॥
हरी भूमि ऋतु नई सुहाई। झींगर शब्द सों टेर लगाई ॥
बाग वृक्ष फल फूल सुहाये। वेलि वेलि में पुहुप दिखाये ॥
आस पास खेतन की शोभा। गोभ गोभ में दीखत गोभा ॥

॥ दोहा ॥

जोगजीत या ग्राम की, छवि को अन्त न पार।
जहाँ प्रभू परगट भये, संत रूप अवतार॥

॥ चौपाई ॥

सोमवार की रैन सुहाये। सोवत कुंजो दरशन पाये॥
श्याम वदन छवि नैन विशाला। शीश मुकुट वैजंती माला।
कानन में कुंडल झलकाई। घूंघरवाली अलक सुहाई॥
पीतांबर अति ही छवि छायो। चतुर्भुजी प्रभु दरश दिखायो॥
हरि जी मुख सों वचन सुनाये। कुंजो यों तब गर्भहि आये॥
शोभन को हम जो वर दियो। अपनो वाक्य सत्य सो कियो॥
तैं जो भक्ति करी मोसे हूं। ताते तव सुत हो सुख देहूं॥
भई भोर जब जाग चितानी। सबसों कुंजो वचन बखानी॥

॥ दोहा ॥

भादों तीज सुदी हुती, दिन था मंगलवार।
सात घड़ी चढ़ते दिवस, प्रभु लीनों अवतार॥

॥ चौपाई ॥

जन्म लेत चांदन दरसायो। नर नारिन के दृष्टि परायो॥
भूमि परत पर रोये नांहीं। मुसकाने होठन के मांहीं॥

भीतर बाहर भई वधाई । आपस में सब सुनी सुनाई ॥
एक तो जा पंडित को लाया । दूब हाथ में लिये हि आया ॥
प्रागदास को दई अशीषा । बालक जीवो बहुत बरीसा ॥
प्रागदास तेहि आदर कीन्हों । चौकी ऊपर आसन दीन्हों ॥
आंगन मांहि फरस बिछवाई । जाति बन्धु सब लिये बुलाई ॥
रोली चावल थाल जु लाये । पंडित के आगे धरवाये ॥

॥ दोहा ॥

भरी परात बीड़ा धरे, मुरलीधर बैठार ।
एक ओर कुल की वधू, गावें मंगलचार ॥

॥ चौपाई ॥

प्रागदास द्विज सों यों बोला । धरिये नाम ग्रह सब खोला ॥
जब ब्राह्मण पत्रा कर लीन्हा । गिरह नक्षत्र नीके चीन्हा ॥
दिन अरु समा जु तिथी विचारी । पट्टे पर कुंडलि लिख धारी ॥
गिरह विचार विचारहि राखे । प्रागदास सों हँसि कर भाषे ॥
याके गिरह नक्षत्र जानों । भूप देवतन सों वड़ मानों ॥
व्है है वड़भागी संसारा । भक्ति भानु जनु कोइ सँवारा ॥
जानों तुम्हरे घर श्री प्यारे । विष्णु कला लीन्हों अवतारे ॥
याको बहु नर नारी ध्यावें । सुमिर नाम नित हरि पद पावें ॥

॥ दोहा ॥

भागदास निहचे कियो, सुन के वचन प्रभाय।
कृत कृत अपने को लख्यो, कुल पारायण जान॥

॥ चौपाई ॥

सुनकर बोली जसुदा दादी। पांडे सांच कही मुखवादी॥
जनम होत अचरज भयो भारी। भवन सुगन्ध भई उजियारी॥
अनेक अचानक बाजन बाजे। भेरि शंख दुंदुभि धुनि गाजे॥
तुम सों सुनि कर निश्चय धारी। जेतक बैठे थे नर नारी॥
सुन पंडित का हुलसा हीया। जनम पत्र फिर लिखना कीया॥
जनम पत्र लिखता ही जावे। हँसि हँसि ऐसो वचन सुनावे॥
हुइ हैं बडभागी गुणवंता। याको हित करि हैं भगवंता॥

॥ दोहा ॥

सत्रहसो अरू साठ को, संवत लिखा संवार॥
भादों तीज सुदी जु तिथि, शुभ दिन मंगलवार॥

॥ चौपाई ॥

सात घड़ी दिन चढ़ा पिछानो। शुभ नक्षत्र चित्रा जानों॥
सुम्य समो तुल राशि बताई। नाम धर्यो रणजीत सुनाई॥
गिरहों की गति नीके देखी। समझ धरी दावो करि लेखी॥

बड़ी आयु जस होवे भारी। जती सती संतोष सु धारी ॥
याके तिरिया लिखी जु नांहीं । भक्ति तेज बाढ़े जग मांहीं ॥
मन के विरक्त तन के राजा । जीव उधार संवारन काजा ॥
छत्रपति अरू भूप भुवाला । दरशन करिके होयं निहाला ॥
वृत्ति सतोगुण मन वैरागा। लोक भोग सों रहे जु भागा ॥
हो सतगुरु स्वामिन को स्वामी । अंतरजामी सब दिशि नामी ॥
पूरन पत्री सबन सुनाई। प्रागदास के ले कर दाई ॥

॥ दोहा ॥

पंडित के टीका कियो, धरि बहु भेंट हुलास ।
पिता जु मुरलीदास ने, दादा प्रागहि दास ॥

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मण ने कर थाल जु लीना। सब के माथे तिलक जु कीना ॥
पांच गऊ पट द्रव्य विधानों। दइ पंडित सोहि प्रोहित जानों ॥
भाइन के कर बीड़े दीन्हें । हाथ जोड़ि हँस विदा जु कीन्हें ॥
विप्रन को गौ दान जो दीन्हीं। आछी गौ सह वत्स नवीनी ॥
एक एक के दई जो हाथा। दुहनी वस्त्र समग्री साथा ॥
कुल ध्यानिन को चीर उढ़ाये। यथा योग नेगन द्रव पाये ॥
ढ़ाढ़ी डोम चारन भट जेते। भांड भगतिया पातर तेते ॥
सिरोपाव द्रव वाहन दीने । करि सत्कार विदा जो कीने ॥

॥ दोहा ॥

जाचक सब परसन भये, दे दे चले असीस।
मुरलीधर को पुत्र ही, जीवो बहुत बरीस॥

॥ चौपाई ॥

नारि नवीन बधाई गावें। आप आप घरसों बन ठन आवें॥
मन हरपें अरु चाव बढावें। भीतर बाहर आवें जावें॥
नारि कमीन कहँ हँस बानी। सुनिये बैन जसोधा रानी॥
पोता सुना भया अवतारी। हम तो लेंहि बधाई भारी॥
जो जिन मांगा सो ही दीया। दादा का हुलसा बड़ हीया॥
वंदनवार जु घर घर द्वारे।। मालन बाँधत फिरी जु सारे॥
पांच दिवस लौं नोबत बाजी। प्रागदास के द्वारे साजी॥
जनम उछाह भयो अति भारी। धन पुर धन धन देश महारी॥

॥ दोहा ॥

जोगजीत वा दिवस पर, तन मन वारे प्राण।
जन्म लीला महाराज की, पढ़ सुन हो कल्याण॥

(इति जन्म लीला तृतीयो विश्रामः)

※ अथ बाल चरित्र बर्णते ※

॥ दोहा ॥

लीला जन्म चरित्र की, कछु इक करी प्रकास ।
बाल चरित्र अब कहत हूँ, मन में बढ्यो हुलास ॥

॥ चौपाई ॥

लगी खिलावन तिय सुखसानी । अप अप नाते कहि कहि बानी ॥
कबही गोद पालने माहीं । लाड़ लड़ावें हँसें हँसाहीं ॥
रोग न आवे रोवे नाहीं । बदन सांवरो छवि अधिकाहीं ॥
दिन दिन तन सों बढ़ने लागे । लाड़ लड़ावें सो बड़ भागे ॥
कुल कुटुंब के सब अनुरागे । लाड़ लड़ावें आनंद पागे ॥
नाम लेय ता ओर निहारें । मृदु मुसकाय बहुत किलकारें ॥
घुटनों चले खड़े हो जावें । करें केलि बहु मोद बढ़ावें ॥
दो दंतियन की शोभा भारी । शीस लटूरी घूंघरवारी ॥
नैन बड़न सों जब वह जोहे । नर नारिन के मन को मोहे ॥
दादी भूवा चाल सिखावैं । चरण डिगे तब मृदु मुसकावैं ॥

॥ दोहा ॥

बरस दिना के जब भये, चलें डगमगी चाल ।
बचन कहैं कछु तोतरे, मुरली धर के लाल ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिनां यों मन में आया। झांई मांई खेल मचाया॥
बैठ लखैं फिरि हैं जग सारा। खेल मांहि यह ज्ञान विचारा॥
खड़े होय फिरते ही जावें। आनंद में अति ही हुलसावें॥
जहँ खेलत मुरली धर पूता। उहाँ एक आयो अवधूता॥
तन जु दिगम्बर श्याम स्वरूपा। नैन कमल दल अधिक अनूपा॥
चरन कमल सुंदर शुभकारी। जोगजीत तिन पर बलिहारी॥
आजानु बाहु दोउ सुन्दर राजें। नाभि गहरि कटि केहरि लाजें॥
अंग अंग अति शोभा भारी। सुन्दर बाबरि घूंघर वारी॥

॥ दोहा ॥

बोध रूप आनंद छवि, मुक्ति रूप सुखदाय।
जोगजीत सोइ पुरुषनें, रणजीता दरशाय॥

॥ चौपाई ॥

सब लड़कन के देखा ओड़ी। सब तन देखि दृष्टि पुनि मोड़ी॥
रणजीताको जभी निहारा। मुसकाने पहिचान पियारा॥
आव कहि कर झाला दीन्हां। आया निकट बाँह गहि लीन्हां॥
दोऊ हाथ से ताहि उठाही। कांधे ऊपर लिया चढ़ाही॥
चाले उछलत दौड़त धाये। बड़ तल जाय गोद बिठलाये॥
कृपा प्यार बहुत ही कीये। पुचकारे दो पेड़े दीये॥

५ वर्ष की अवस्था में श्री चरणदासजी महाराज को
अवधूत वेश में महा मुनीन्द्र श्री शुकदेवजी
महाराज का दर्शन देकर पेड़ा देना ।

पृष्ठ—२

प्रकाशक :-
श्री शुक चरणदासीय साहित्य प्रकाशक ट्रस्ट, जयपुर

बहुरि कही तोहि सिप हम कीन्हां । हूज्यो संत यही वर दीन्हां ॥
भव सागर को खेवट व्है है । बहु जग जीवन पार लंघै है ॥

॥ दोहा ॥

जाको मंतर देहुगे, सो पारायण होय ।
जन्म मरण वाके मिटे, यामें संश न कोय ॥

॥ चौपाई ॥

शाह रंक पृथ्वी पति राजा । दरशन तो करिहैं अप काजा ॥
सर्व दिशा में हो जस तेरो । शिर पर हाथ रहे नित मेरो ॥
नई संप्रदा होय सुभागी । शिप चेले ह्वै हैं बड़ त्यागी ॥
उतरि भूमि तब परणम कीन्हों । वर दीयो सो सिर धर लीन्हों ॥
कहि रणजीत अभी सुत मेरे । नदी मांहि सो रहे घनेरे ॥
बाल चरित्तर मुनि मुसकाये । मीन जु कछ मछ सुत बतलाये ॥
कही बरस चौबीस के माहीं । सरिता सूखि रहे जल नांहीं ॥
पुत्र कहां तब तो रहे मीता । नीची नार करी रणजीता ॥

॥ दोहा ॥

लडकों ही ने जा कही, प्रागदास गृह मांहि ।
रणजीता को ले कोई, बैठा जा बड़ छांहिं ॥

॥ चौपाई ॥

रूप अतीत सभी तन नागा । कांधे धर ले गया जु भागा ॥
सुन दादा लोगउ घबराये । रणजीता को ढूंढन धाये ॥
आवत अवधूता नर जानों । बालक ढिंग सों तभी लुकानो ॥
तब नर बड़ के नीचे आये । रणजीता को लखि सुख पाये ॥
कहँ अतीत पूछें सब लाला । रक्षा करी जु दीन दयाला ॥
बालक कही छोड़ मो तांहीं । बड़ मध लुके अभी थे ह्यांहीं ॥
सुन कर दूर दूर नर धाये । वे अवधूता कहीं न पाये ॥
गोद लिया दादा रणजीता । पूछा मर्म सकल कहि दीता ॥

॥ दोहा ॥

नगन पुरुष इक आयके, काँधे लिया चढ़ाय ।
लड़कन में से धाय मोहि, ले बैठे बड़ छांहि ॥

॥ सोरठा ॥

रणजीता कहे बैन, जो जो कहे महापुरुष ने ।
भिन्न भिन्न सुखदैन, मधुर मधुर तुतराय मुख ॥

॥ चौपाई ॥

सुनकर लोगन अचरज कीन्हा । महापुरुष को सिद्ध हि चीन्हा ॥
कही कि धन रणजीता प्यारे । दरशन पाये भाग तिहारे ॥

फिर बालक को घर ही लाये । दादी माता कंठ लगाये ॥
पेड़ा सब को बाँट जु दीने । अन्न द्रव्य के दान जु कीन्हे ॥
जो पूछे सब सों कहि बाता । सुन कहि धन्य भाग तुव ताता ॥
पूरन माँसी शरद पिछानों चढ़ा पहर दिन बृहस्पति जानों ॥
महा पुरुष जब दरशन दीयो । रणजीता अपनों कर लीयो ॥
पँचवे बरस जु लीला भाई । सो मैं कछु यह वर्ण सुनाई ॥

(इति महापुरुष मिलन चतुर्थ विश्रामः)

※ अथ छठे बरस को चरित्र ※

॥ दोहा ॥

छठे बरस के चरित को, अब कछु करूँ बखान ।
पाँढे के बिठलाइया, रणजीता सुखदान ॥

॥ चौपाई ॥

प्राणदास से जसुधा रानी । मधुर जु मुख निशि बोली बानी ॥
भोरहि पाँढे को जु बुलावो । रणजीता चटशाल बिठावो ॥
प्रात भया जब कीया वैसे । रैन समय ठहराई जैसे ॥
पाँडेजी को लिया बुलाई । रणजीता तिन को सौंपाई ॥
कहा कि याहि पढ़ावो नीके । कृपा प्यार ज करके जीके ॥

आछा दिवस विचार जु लीना। पाँडे तभ पढ़ावन कीना॥
लगा पढ़ावन ओ ना मासी। रणजीता हो कहा उदासी॥
नन्ना मम्मा कहा सिखावो। नाम प्रभू का क्यों न पढ़ावो॥

॥ दोहा ॥

जासों होय कल्याण ही, पहुचैं हरि के धाम।
राम भजन बिन पढ़त अरु, पाँडे किसी न काम॥

॥ चौपाई ॥

साँची कहूँ तुम्हारे आगे। राम भजन बिनु मन नहिं लागे॥
पाँडे सोच बहुत मन मानी। इनकी बातें अचरज जानी॥
फिर रणजीता को घर लाया। दादा सेती मरम सुनाया॥
दादा समझ सहज मन आया। रणजीता घर रख समझाया॥
कहि पाँडे कल फिर ले जइयो। दपट डाट करि याहि पढ़इयो॥
अगले दिन पाँडे बुलवाया। रणजीता फिर संग पठाया॥
ये जू पाँडे बहुरि पढ़ावे। सो पढ़ना रणजीत न भावे॥
पढ़ूँ न मुख कहि कर हठ ठानों। तब पाँडे मन माँहि रिसानों॥

॥ दोहा ॥

मारन को पाँडे तभी, लई लकुट कर तान।
चले नाड रणजीत पर, सुमिरे श्री भगवान॥

॥ चौपाई ॥

अपना सा पाँडे बहु कीना । पर इन नेक न उत्तर दीना ॥
थकि पाँडे तब ऐसे कहिये । मौन छाँडि मुख बोला चहिये ॥
सोचि सोचि रणजीता भाषे । दृष्टि उठा पाँडे सूँ आपे ॥
कल की बात जु आज सुनाई । हाथ जोड़ कर विनय कराई ॥
डाटो मारो पढूँ न क्योंही । मेरी बात साँच है योंही ॥
राम नाम जो पढ़ो पढ़ावो । मो तारो भव तुम तरजावो ॥
हरि की भक्ति साधु की संगति । याही तें होय जीवों की गति ॥
भजन बिना अरु सकल बिसारे । यह निश्चय हिय टेक हमारे ॥

॥ दोहा ॥

जेते थे चटशालिये, ताक रहे मुख नैन ।
समझ हिये पाँडे कही, धन रणजीता बैन ॥

॥ चौपाई ॥

शोभन पर हरि किरपा कीन्हीं । भक्ति बेलि फूली ता चीन्हीं ॥
तुमकुल भक्ति सदा चलि आई । तिनमें तुम दीखो अधिकाई ॥
हो अवतार भक्ति अधिकारी । यह निश्चय हिय में हम धारी ॥
पकड़ बाँह ब्राह्मण ले आयो । रणजीता को घर संग लायो ॥
दादी के कर में कर दीन्हाँ । करि महिमा जैसा सुत कीन्हाँ ॥
दादी ने गहि कंठ लगायो । रणजीता से मोह [illegible] ॥

कहा दादी अब नांहि पढ़ावे । खेलो लड़कन संग सुखदावे ॥
दादा हू सुन कर हित धारे । कहि निशंक खेलो मो प्यारे ॥

॥ दोहा ॥

घर के नर नारी जिते, सबन कहा यहि रोच ।
बड़ा होय पढ़ि है तबे, अभी न लाबो सोच ॥

॥ चौपाई ॥

होय मगन गोदी से उतरे । करके स्नान भजन कियो सुथरे ॥
तिलक छाप वस्तर अँग छाजे । लड़कन में तब जाय विराजे ॥
छठा उतरि संवत् लग साता । ताके चरित कहूँ अब गाथा ॥
इक दिन मुरलीधर पितु साथा । सोय गये करते ही वाता ॥
भोर भये जागे तब रोये । दादी माता पूछन जोये ॥
कह रणजीत पिता हम दोई । तामें बिछुरन बेग जु होई ॥

॥ दोहा ॥

सुपने में ऐसा लखा, चढ़ा विमानहि जाय ।
मैं भी गोदी में हुता, मोकों दिया छिटकाय ॥

॥ चौपाई ॥

साँच कही तिन मुखसों बानी । बालक जानि किन्हूँ नहिं मानी ॥
एक महीने में भया न्यारा । रणजीता वो वचन उचारा ॥

मुरलीधर श्री हरि रंग राते। कर भोजन परवत पर जाते॥
बैठ शिला पर ध्यान लगाही। एक मनुप तिन संग रहाही॥
दूर बैठि करता रखवारी। प्रागदास यह आयुस धारी॥
एक दिना अचरज भयो ऐसो। ध्यान करे परवत पर जैसो॥
मानुप संग का सोवत जागा। मुरलीधर को ताकन लागा॥
कपड़े धरे सभी जो पाये। मुरलीधर वहाँ ना दरसाये॥

॥ दोहा ॥

पटका और हिजारही, पगड़ी जामा शाल।
कित गये नागा होय के, सोच मनुप बेहाल॥

॥ चौपाई ॥

ढूँढत ढूँढत कहीं न पाया। कपड़े ले उनके घर आया॥
कुटुंब नार नरसों कहि बाता। व्याकुल रहे सभी जो राता॥
भोर भये ढूँढन को धाये। मुरलीधर को खोज न पाये॥
ढूँढा जंगल और पहाड़ा। ठोर ठोर का लीना झाड़ा॥
दूर दूर तक ढूँढन धाये। बहु पचिहारे खोज न पाये॥
आस छोड़ि बैठे घर माँहीं। पुनि रणजीता स्वप्न सुनाई॥
पिता विमान चढ़ा मैं देखा। दिव्य चतुर्भुज रूप विशेपा॥
चतुर्भुजी संग संत सुखारे। हरि गुन गावत मंगल चारे॥

॥ दोहा ॥

सुनत वचन रणजीत के, सब को भई प्रतीति।
आगे हू याने कही, स्वप्न जु साँची नीति॥

॥ चौपाई ॥

प्रागदास नवधा रंग भीने । सभी कुटुंब को धीरज दीने ॥
एक दिना धर्मशाला बैठे । कथा सुनत ताहीं गये लेटे ॥
कह्यो सितावी भूमि लिपावो । ताके ऊपर कुशा बिछावो ॥
दौड़े आये लोग लुगाई । भूमि लीपकर कुशा बिछाई ॥
प्रणाम प्रभुजी को करि लेटे । आस पास सत्संगी बैठे ॥
राम कृष्ण कहते तन त्यागा । हरि के चरण कमल जा लागा ॥
घिर आये कुल के ब्योहारी । रुदन करन लागे नर नारी ॥
सुंदर तहां विमान बनाई । ताके ऊपर देह सजाई ॥
भजन करत ले चाले धाई । नदी किनारे देह जराई ॥
सुनि जसुधा जब पति तन जारी । हाय राम कह भइ वपु न्यारी ॥

॥ दोहा ॥

तन त्यागा पति के विरह, सतवंती अधिकाय ।
ऐसी कोइ एक जगत् में, संग पिया के जाय ॥

॥ चौपाई ॥

रणजीता की जो महतारी । प्रागदास रहे कुटुंब मँझारी ॥
प्रागदास के भइया दोई । इक श्यामा इक सुंदर जोई ॥
जिन का कुटुंब पास जो आवे । समझावे और नेह जनावे ॥
पर कुंजो को धीरज नांहीं । रात दिनां कुढ़ते ही आहीं ॥

मंगसिर मुरलीदास समाये । फागुन प्रागदास पद पाये ॥
तिनके सात महीना पाछे । गंगा गमन विचारा आछे ॥
अठवाँ बरस लगा रणजीता । माता पूछी इनसों नीता ॥
गंगा न्हानें जइ हों ताता । रणजीता कहि आछी बाता ॥

॥ दोहा ॥

गंगा न्हानें जाय हूँ, या कार्तिक के माँहिं ॥
यह तो काज जरूर है, यहाँ तोहि छोड़ूँ नांहिं ॥

(इति प्रागदास मुरलीधर समावन पंचमो विश्रामः)

* अथ गंगा गमन प्रसंग *

॥ चौपाई ॥

दादा के भाई घर आये । रणजीता यों वचन सुनाये ॥
गंगा न्हान जात महतारी । अज्ञा माँगे ददा तिहारी ॥
तब उन कही जु आछी बाता । शुभ दिन गमन करो परभाता ॥
रथ को साज आदमी साथा । विदा उन्हें दी अपने हाथा ॥
बैठि जु तामें कुंजो माई । रणजीता को संग लिवाई ॥
चलते चलते आये राही । पहुँचे कोटकासिम के माँहीं ॥
वहाँ थी प्रागदास की बहिना । मिली गले लग हुआ जु रहना ॥
रामा नाम जु बात बनाई । कुंजो कितको गमन कराई ॥

शीस हाथ धरि बहु हित कीना। श्राप छुटा मुख से कहि दीना॥
कहा कि तन पृथवी पर डारो। स्वर्ग लोक को वेग पधारो॥
उन सिर नाय होय श्राधीना। कै इन जाना कै उन चीना॥
घुड़िया गाड़ी में डरपावे। बोल ना निकसे तन कंपावे॥

॥ दोहा ॥

सिंह बहुत प्रसन्न हो, गया जु बन की श्रोड़।
दोय तीर वहां जाय के, तन को दीना छोड़॥

॥ चौपाई ॥

श्राये सिमटि बहल के पासा। लोगन देखा अजब तमाशा॥
मंजिल मंजिल कुशल मनाई। श्रा पहुँचे दिल्ली के माँहीं॥
बड़ी पौर पर ही जब श्राये। नाना मामा गले लगाये॥
भीतर काहू बात सुनाई। कुंजो चल ड्योढ़ी पर श्राई॥
रणजीता फिर आये वहाँ ही। खुशी होय कर लागे पाँही॥
मामा गह करि हिये लगाये। भीतर गये सभी हरपाये॥
जुदा जुदा सब ने हित कीना। नानी गहि गोदी में लीना॥
सब से हिल मिल रहने लागे। जोगजीत श्रनंद में पागे॥

॥ दोहा ॥

खेलें खावें सो रहें, जागें बारहि बार।
जोगजीत रणजीत ही, भजन करें करतार॥

त श्री दिल्ली श्रागमन नाम षष्टमो विश्रामः संपूर्णः

* अथ मुल्ला के पढ़ावन व सगाई प्रसंग वर्णते *

एक दिनाँ नानी अरु नाना । उही किले ते आये मामा ॥
सहजे कुंजो भी तहाँ आई । सब मिल कर यह बात चलाई ॥
कहि मुल्ला द्वारे बिठलावो । रणजीता ताहि सौंपि पढ़ावो ॥
नाना ने सोई भल चीन्हीं । दिनाँ चार में ऐसी कीन्हीं ॥
काबिल मुल्ला इक बुलवाया । अपने द्वार ताहि बैठाया ॥
नाना ही की आज्ञा मानी । गये सही इन मनहि गिलानी ॥
सोचि सोचि मन माँहीं ठानी । दुखी होंयगे नाना नानी ॥
कैसे मेटूँ उनका कीया । तातें पढ़नें में मन दीया ॥

॥ दोहा ॥

पूस कोट तें आप के, पढ़ने बैठे माह ।
उठी सगाई तास की, सावन ही में आहि ॥

॥ चौपाई ॥

नाई ब्राह्मण भाट जो आये । मरूतब से रणजीत बुलाये ॥
माता ने दिखलाया ताई । गुप्त भाव रणजीता लाई ॥
मुसकाने बोले बड़भागी । माता मोहि कहा बेचन लागी ॥
नेगी बोले सुन्दर लाला । जैसी बरनी परम बिशाला ॥
तब कुंजो हँस करि कह दीना । होत सगाई सुन परवीना ॥

ब्याह करो तुम नोशी आवे। मन हरषो सुत काहि रिसावे।
सुनि बोले महाराजा तब ही । मैं तिरिया ब्याहूँ नहिं कबही।
जाकी व्याध बहुत ही लागे। मोह उपाध बहुत ही पागे

॥ दोहा ॥

छुटावे भगवान कूँ, फँसे माया जार।
सोच बढ़ावे निशि दिनाँ, ऐसी दुर्जन नार॥

॥ चौपाई ॥

नारी के फैलाव घने ही । सुत पुत्री अरु समधाने ही।
सभी ओर से व्याधा लागे। हिये वासना खोटी जागे ॥
आसा लग भरमें चौरासी । तातें समझ भजूँ अविनाशी ॥
जो माता मो पर हित कीजे। व्याह करन को नाम न लीजे ॥
सुनि नानी मामी झिड़कारे। बड़े भगत भये सबसों न्यारे ॥
तभी सहज में नाना आही । बैठे उतही पलंग बिछाही॥
सबने कही जु उनसे आके । रणजीता के वचन सुना के ॥
सुन के नाना ही मुसकाये । हरिजन प्यारे निकट बुलाये॥
मन में तो अवतारी जाना । ऊपर टेढ़ा बोलन ठाना ॥
कहो नार कैसे दुखदाई । व्याह करन में कहा बुराई ॥

॥ दोहा ॥

बालक बुधि सों कहत हो, औगुन खोट निकास।
महिमा तुम जानी नहीं, गुण अरु भोग विलास ॥

॥ चौपाई ॥

नारी से उपजे सुत कोई । कुल में होय उजाला सोई ॥
बिन संतान अँधेरा मानो । ज्यों दीपक बिन मन्दिर जानों ॥
सुंदर घर सूनो सो लागे । पुत्र बिना कुल चले न आगे ॥
नाम रहै नहिं मूये पाछे ॥ उजड़ जाय कोइ कहे न आछे ॥
कहै अउत जे कुल के लोई । भूत होय उठ लागे सोई ॥
पितर करम बिन गतिहू नाँहीं । कैसे मिले जु पितरों माँहीं ॥
नाम लेन अरु पानी देवा । व्याह बिना नहिं तन की सेवा ॥
तरुण समय नारी सुख देवे । माँहिं बुढ़ापे पुत्तर सेवे ॥

॥ दोहा ॥

तन छूटे पुत्तर रहे, देवे नीके दाग ।
किरिया करे सँभाल कर, लोग कहैं धन भाग ॥

॥ चौपाई ॥

नासकेत ने योंहि बखानी । गरुड़ पुराण माँहिं यों जानी ॥
महाभारत में सुनकर देखो । सभी पुरानन में यों लेखो ॥
धर्मशास्त्र में यही बखानी । सभी ऋषिश्वर नीकी जानी ॥
तप करके फिर व्याह कराया । नारी से पुत्तर उपजाया ॥
देवत दैयत अरु ऋषि ताँई । हित सों नारी संग लगाई ॥
नारी बिन को रह्यो नियारो । या जग में जो जो तन धारो ॥

॥ दोहा ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश ही, ईश्वर सब शिरमोर।
तीनो के संग नारि हैं, करि विचार हिय ठोर॥
सतयुग अरु त्रेता विषे, द्वापर ही के माँहिं।
भक्ति करी नारी सहित, किनहूँ त्यागी नाँहिं॥
अरु कलियुग के भक्त ही, लेकर नारी साथ।
भक्ति करी मुक्ता भये, यही अभी की बात॥
घने हुये जे संत ही, भक्तमाल सुन जानि।
तिनमें इक कुछ कहत हूँ, जिनको नाम बखानि॥
कबीर भक्त रैदास ही, नरहरि अरु जैदेव।
नरसी ने गुजरात में, करी भक्ति निरलेव॥
कालू अरु कूबा भये, सेऊ संमन साथ।
रंका बंका ही भये, सो जग में विख्यात॥

॥ चौपाई ॥

और जगत में यही निहारो। देख दृष्टि सों लेउ विचारो॥
तिरिया बिन इतबार न आवे। घर साजे तो ना बन आवे॥
कर कर भोजन कौन खुवावे। नारी बिन बहु कष्ट सहावे॥
ऋण चाहे तो देय न कोई। रँडवे की परतीति न होई॥
जाके साथ होय जो नारी। सोई कहावे बहु इतबारी॥

रोग आय तिय छाँड़ि न जावे। लोग तिहायत पास न आवें॥
दुख सुख संग लगीही रहै। बिपता पड़े तो मिलि कर सहै॥
अर्ध शरीर अरु तन सुखदाई। आछी जानो करो सगाई॥
नहिं बरजोरी गोद भराऊँ। मुँदरी ले अँगुरी पहराऊँ॥
ब्याह करूँ तब हठ नहिं मानूँ। बड़े करैं सोई परवानूँ॥

॥ दोहा ॥

नाना की सुनि बात ही, चौंके सर्वदयाल।
सकुचूँ तो बंधन बँधूँ, पड़ूँ मोह के जाल॥

॥ चौपाई ॥

संमुख होय नाना से आखे। तिनको उत्तर मुखसे भाखे॥
शरमाते धीरज से बोले। कहन लगे हिरदे की खोले॥
तुमतो हमरे बड़े कहाओ। कहा तिया करि मोहि फँसाओ॥
तुमको तो ऐसा नहिं चहिये। हमरी रचा ही में रहिये॥
यों जानी मैं नाँहिं पियारा। बोझ देत हो मो शिर भारा॥
मैं न सगाई सुपने लेहूँ। जो तुम लेहु तो मैं उठि जयहूँ॥
तुम जो अपिन की साख भरत हो। उन्हीं बरोबर मोहि घरत हो॥
मोहि न पैहो अपने घर में। जाय रहूँगो काहि गिरी में॥

॥ दोहा ॥

वे समरथ निरलेप हैं लगे न तिरिया रोग।
मैं गरीब आधीन हूँ, नहीं जो उनके जोग॥

॥ चौपाई ॥

उनको माया मोह न लागे। मोको विपदा सूमत आगे॥
जिन जिन नारी संग लगाई। जग की व्याधा घनी उठाई॥
अब मैं कहूँ अवज्ञा ठानूँ। श्रीराम कहा कष्ट बखानूँ॥
गौतम ही का घर जो सिगरा। नारी कारण सब ही बिगरा॥
जमदगनी मुनि महा सुभागा। नारी संबंध सू तन त्यागा॥
शृंगी ऋषि जो नेक लुभाया। जग में बड़ा कलंक लगाया॥
बहुत ऋषिन की कहूँ कहा बाता। दुख पायो नारी के साथा॥
साध संत सब यही चितावें। नारी का संग बुरा बतावें॥
झूठी हलकी अरु निबुद्धी। याको संग नहिं करे सुबुद्धी॥
बात बात में ताना लावे। विषय स्वाद के माँहि फँसावे॥

॥ चौपाई ॥

नारी का संग जो करे, पड़े बंध में सोय।
लाज तोख गल में गिरे, छुटकारा नहिं होय॥

॥ चौपाई ॥

अरु गिरही जे बँधे सु देखो। नारी ही के पेच विशेखो॥
याही के रंग माँहि रंगावे। सुत पुत्री तासों उपजावे॥

अनेक भाँति के फिकर लगावे। सोचे बहुत महा दुख पावे॥
नारी वश मन रहे जु साथा। बोले बोलहि वाहि सुहाता॥
मात पिता हू से मुँह मोड़े। दया धर्म से नाता तोड़े॥
तिरिया ही के हो गये रूपा। जैसो आतम देह स्वरूपा॥
लिप्त भये ऐसी गति पावे। जाके ध्यान सोही बन जावे॥
व्याह करन को जब नर जावे। काजल अंजन नैन लगावे॥
तन में छहे कपड़े पहरे। भूषण सजे नारि जो लहरे॥
व्याह करे गठ जोड़ा बाँधे। समझे नहीं हिये में आँधे॥

॥ दोहा ॥

पंचों मिलि बाँधा उसे, दिया नारि के साथ।
वाही के वश होगया, रहा न अपने हाथ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे पची पिंजरे माँहीं। बाँधा पशु खूँटे के ताहीं॥
बंदीवान नहीं सुख पावे। मनही मन बहुता पछितावे॥
व्याह करूँ तो यह गति मेरी। पहरूँ नहीं मोह की वेरी॥
द्रव्य जमीन और जू नारी। चिंता घनी लगावन हारी॥
इन तीनों को कभी न लेहूँ। ध्यान भजन माँहीं मन देहूँ॥
साँच कहूँ चिंता के माँहीं। भजन ध्यान मन लागे नाँहीं॥
चिंता राखे हिय को मैला। कैसे पावे हरि का गैला॥
बोलो साँच देख मन माँहीं। दया धर्म नारी संग नाँहीं॥

॥ दोहा ॥

जामें घने विकार हैं, संशै शोक संताप।
आशा तृष्णा ही घनी, उठि लागे बहु पाप ॥

॥ चौपाई ॥

धन गिरही जिन बोझ उठाया । नारी सुत ही को अपनाया ॥
कुटुंब काज बहु उद्यम करही । बहुत भाँति करि साजे घरही ॥
जगत साँच उनहूँ कर माना । जाने नहिं आखिर मर जाना ॥
झूठ कपट से द्रव्य कमावे । संग न चाले जब मर जावे ॥
नारी सुत जो बहुत पियारे । तन छूटे जब हो जा न्यारे ॥
जनम गँवावे जिनकी लाजा । जीवत मरत न आवे काजा ॥
यह अज्ञानी अपनों जाने । झूठा जग को ना पहचाने ॥
कौतुक सा उपजे मिटि जावे । जामें गिरही बहु दुख पावे ॥
मैं जानत हूँ छल सानी के । यामें फँसू न अपने ही के ॥
भव सागर में नेक न सुख है । घना बखेड़ा दुख ही दुख है ॥

॥ दोहा ॥

तुमहू किरपा ही करो, धरो शीस मम हाथ।
कबहू फिर न चलाइये, व्याह करन की बात ॥

॥ चौपाई ॥

हो तुम बड़े यही अब कीजे। मेरी सी मोहि दृढ़ता दीजे ॥
कोटि भाँति यहि हिय में धारी। नारी ब्याह न हूँ घरबारी ॥
हँस करि नाना जब यों कहिया। उर से लाय शीस कर धरिया ॥
प्यार किया गोदी बैठारा। धन्य धन्य कहि परन तुम्हारा ॥
भाग बड़े ऐसी बुधि लाये। हम सुनकर अचरज में आये ॥
जो तेरे मन में यों आई। हम कबहू नहिं लेहिं सगाई ॥
जेती हुती सहन में माई। इनकी सुनि मन में हरपाई ॥
सबहीं ने औतारी जाना। धन धन कहा बहुत सुख माना ॥

॥ दोहा ॥

करन सगाई आये जो, मन में भये उदास।
नारी ब्राह्मण भाट जे, सबही गये उदास ॥
लालन बाहर जायके, कंगना लियो बनाय।
बाँधा बाँये पाँव में, हरि से नेह लगाय ॥
थपी सगारथ कर चुके, श्यामसुँदर के संग।
और सगाई ना करूँ, चढ़े ना दूजो रंग ॥

(इति सगाई निरवारन सप्तमो विश्रामः)

अथ मुल्ला कादरबख्श से संवाद

॥ चौपाई ॥

रणजीता फिर मख्तब गये । सबक करीमा पढ़तें भये ॥
अरु लड़के बहु पढ़ने आवें । प्रसिद्ध मखतब यही कहावें ॥
मुल्ला कादरबख्श कहावे । हाँसी जिनका वतन कहावे ॥
आठ महीने पढ़ते भये । खालकबारी सब पढ़ गये ॥
अव्वल करीमा पढ़ने लागे । चौथाई पढ़ गये सुभागे ॥
वहाँ से फेर पढ़न नहिं कीना । माँहिं किताब न मन को दीना ॥
एक दिना भादों के माँहीं । रणजीता गये मख्तब ठाँहीं ॥
मुल्ला सबक पढ़ावन लागा । पढ़ें नहीं व्हाँसों मन भागा ॥
मुल्ला फिर पढ़ने को कहा । भक्तराज सुनि चुप हो रहा ॥
सोचहि सोच रहे मन माँहीं । हमको तो अब पढ़ना नाहीं ॥

॥ दोहा ॥

खोल मियाँ से सब कहूँ, अपने जी की गाँस ।
इतने दिन पढ़ते भये, चित रहा सदा उदास ॥

॥ चौपाई ॥

फेर तीसरे मुल्ला बोले । जी की बात कहो सब खोले ॥
कै काहू डाँटा कै कछु रोगा । कैसे हो रहे धारे सोगा ॥

सुन कर उलट कही महाराजा। हमको पढ़ने सों नहिं काजा॥
पढ़ूँ लिखूँ नहि क्योंहू कैसे। समझ लेहु निहचै करि ऐसे॥
दुनियाँदारी में नहिं करहूँ। जग के भोग न चित में धरहूँ॥
चौंक मियाँजी देखन लागा। गुस्सा बहु दिल माँहीं पागा॥
मुख से कहा जु नाहीं पढ़िहो। घोड़ा पालकी कैसे चढ़ि हो॥
काहू की करिहो नोकराई। कै चलिहो सिर बोझ उठाई॥
जो तुम पढ़ने सों रहि जै हो। तातें कौन बड़ाई पैहो॥
कहै रणजीता कौन बड़ाई। नेक न चाहूँ सभी तजाई॥

॥ दोहा ॥

करनी मोहि न चाकरी, जाऊँ नहिं दरबार।
इंदर के से राज को, मनमें जानूँ छार॥
भवन कुटुंब साजू नहीं, होना मोहि फकीर।
हिरदे में नित ही रहै, राममिलन की पीर॥

॥ चौपाई ॥

हमें आज से पढ़ना नाँहीं। जिकर न होय फिकर के माँहीं॥
सुनि मुल्ला हैरत में आया। इस लड़के पर रब की छाया॥
करि करि गौर जु यही उचारी। सुन मिया लड़के बात हमारी॥
इलम माँहिं दोउ दौलत जानों। दीन दुनी ही की पहिचानों॥
इलम बिना रब कूँ नहिं पावे। अल्लाह पिछान नेक कहि आवे॥

पढ़े औलिया हुवे जु आगे । इलम बीच ही रब सों लागे ॥
इल्म विना जानें नहि कैसा । इलम रोशनी जानें जैसा ॥
इलम विना दरजे नहिं पावे । जिनको तैं करता ही जावे ॥
मंजिल पहुँच पावे आराम । भूले सब यहाँ जग के काम ॥
आलिम फाजिल जग में होई । जिसका अदब करे सब कोई ॥

॥ दोहा ॥

यही समझ पढ़ने लगो, मन में रख कर धीर ।
इल्म जो हासिल ही करो, पीछे होउ फकीर ॥

॥ चौपाई ॥

तब बोले रणजीत सँभाले । देखे नहिं दरवेश कमाले ॥
उनकी बात कहा तुम जानों । इल्म लुदन्नी ना पहिचानों ॥
जेते हुए पैगम्बर नीके । कब वे पढ़े इलम कब सीखे ॥
धुरतें इल्म लुदन्नी लाये । स्वतः सिद्ध वे पढ़े पढ़ाये ॥
अरु केते हिंदवन के माँहीं । उनको अनुभव पढ़े जु नाँहीं ॥
ऐसी विद्या हक्क मिलावे । इलम तुम्हारा जग भरमावे ॥
तुमको भी है इल्म सवाई । हक्क पिछान कहो क्या पाई ॥
जाकूँ हो पूरा इरफान । सोही जात कूँ ले पहिचान ॥

॥ दोहा ॥

सुन बातें रणजीत की, मुल्ला मन हैरात ।
क्या लड़का मालूम यह, कहै जु धुर की बात ॥

॥ चौपाई ॥

हँस बोले मुल्ला अरु लड़के। बात कहत हो ऐसे अड़के ॥
इल्म लुदन्नी जो तुम लाये । हमको भी कुछ देहु दिखाये ॥
और नहीं इतना ही देखें । तुम्हें औलिया कहें विशेखे ॥
सबक छोड़ि आगे पढ़ि जावो। जाके माने खोल सुनाओ ॥
रणजीता कहि पढ़ि दिखलाऊँ। तुम्हरे मन संदेह मिटाऊँ ॥
लिया करीमा पढ़ने लागे । सबक छोड़ आगे ही आगे ॥
जिनके माने खोल सुनाये । सब ही सुन अचरज में आये ॥
मुल्ला कदमबोस जब हूआ। जिसके दिल का मिट गया दूआ ॥

॥ दोहा ॥

मुल्ला लड़के जोड़ कर, धरा चरण पर शीस ।
कहा कि तुमको है इलम, सांचा बिस्वा बीस ॥

॥ चौपाई ॥

जानी कहि साँचे तुम साँई। इल्म लुदन्नी है अधिकाई ॥
जबतें पढ़ते थे हम सेती । माफ करो तकसीरें जेती ॥
रणजीता सुनके शरमाये । सौंही नैना नाँहिं उठाये ॥
कही जु तुम उस्ताद हमारे। भूलूँ नहिं अहसान तुम्हारे ॥
अदब कायदा मोहि सिखाया। जीभ सँवारी और पढ़ाया ॥
यही सखुन बेजा उच्चारा । मैं गुलाम शागिर्द तुम्हारा ॥

मुझ को तुम अपना ही जानों । जाऊँ कदमों पर कुरबानो ॥
लड़के गये जु अप घर माँहीं । ये आये माता के पाहीं ॥

॥ दोहा ॥

मुल्ला करे तारीफ ही, जहाँ जो बैठे जाय ।
लड़का ही रणजीत यह, है कामिल अधिकाय ॥

॥ चौपाई ॥

भोर भये मोहरें दो लीनी । दे मुल्ला को रुख्सत कीनी ॥
कहा कि रुख़सत हुआ मैं तुमसों । फर्ज मिटा पढ़ने का हमसों ॥
निर्बंध होकर भजन कराऊँ । सहज माँहिं आऊँ अरु जाऊँ ॥
मुल्ला कही अटक नहिं कोई । मन भावे ही कीजे सोई ॥
कभी कभी मैं तुम ढिंग आऊँ। इस जमाल का दरशन पाऊँ ॥
लडकों ने घर घर में भाषी । परगट भई छिपी नहिं राखी ॥
मुल्ला आ नाना से आखी । सब ही कही जु सुख सों साखी ॥
नाना के मन साँच हि आई । पहिले भई सो आप सुनाई ॥

॥ दोहा ॥

दोऊ मिल बातें करी, हँस हँस हर्ष बढ़ाय ।
मुल्ला उठि मख्तब गया, नाना घर मधिं धाय ॥

(इति श्री मुल्ला सों संवाद अष्टमो विश्रामः)

अथ माता पुत्र संवाद वर्णन

॥ चौपाई ॥

नारी सिमटि बहुत जो आई। नाना ने यह बात चलाई ॥
जिन जिन सुनी सकल मुरझानी। दृग भर लाई कुंजो रानी ॥
जननी दुख पायो मन भारो। कुल रीती से सुत लखि न्यारो ॥
पुत्र एक सो भी बस नाँहीं। कही हाथ से निकसो जाही ॥
बड़ो अड़ीलो अपनी ठाने। कहा बड़ों का नाँहीं माने ॥
अपनी बान सो नेक न मोड़े। मन में आवे सो करि छोड़े ॥
डाटूँ तो कछु शंक न लावे। उठि जाने का डर दिखलावे ॥
कहै फकीर होन मन धारी। जाति बंधु कुल पत सब टारी ॥

॥ दोहा ॥

आई सगाई जा दिनाँ, तब भी यह अड़ कीन।
उठि जाऊँगा मैं कहीं, जो तुम गूँठी लीन ॥

॥ चौपाई ॥

डपट जो फिर मरु तब भिजवा। पढ़ने को जो बहुत दबावें ॥
पढ़न माँहिं जो मन नहि लागे। दब कर किसी ओर को भागे ॥
तो सुनि सुनि मैं महा दुःख पाऊँ। ताते हित करके समझाऊँ ॥
धीरज गहि आँसू निरवारे। बैठी जा इकंत चौबारे ॥

रणजीता या ठौर बुलायो । जीने के पट दे बैठायो ॥
पुचकारा अरु हित कर बोली । सोच हिये की सब ही खोली ॥
तोहि पढ़ावन हित यहाँ रहिया । यही हेतु इहरे नहिं गइया ॥
यहाँ ये सब तोहि प्यार करत थे । पढ़वे की ही आस धरत थे ॥

॥ दोहा ॥

अब सब का मन घट गया, जाना छूत कछूत ॥
कुजों के घर माँहि ही, उपजा पूत कपूत ॥

॥ चौपाई ॥

मैं जानत थी यह पढ़ि लैहै । व्याह करूँगी भवन जगैहै ॥
तेरे पिता न भाई होई । चाचा ताऊ सगा न कोई ॥
आगदास इक घर के माँहीं । तुमही एक और कोउ नाहीं ॥
मैं आशा तेरी धर लीनी । तुम मोसे उलटी ही कीनी ।
कोई सींचे वृक्ष लगाई । आशा यही बैठिहूँ छाँइ ।
और नहीं बदला ही दीजे । बधू सहित मम सेवा कीजे ।
यही समझ पढ़ि व्याह कराओ । बाप ददा का नाम चलाओ ।
कुल के माँहिं उजाला कीजे । समझ बड़ों का गैला लीजे ।
मैं भी देखि देखि सुख पाऊँ । कुलवंती हो अधिक कहाऊँ ॥
ताते मैं कहुँ सो हिय धारो । मेरी आज्ञा को मत टारो ॥
अड़ को छाँड़ि पढ़न मन दीजे । और सगाई हित करि लीजे॥
तुम्हरो व्याह करूँ हुलसाऊँ । अपनी इच्छा को फल पाऊँ॥

॥ दोहा ॥

झूँठे भी नहिं भाषिये, अतीत होन की बात।
जग प्राणी हाँसी करें, सुनि दुःख पावे मात॥

॥ चौपाई ॥

ऊँचे कुल के पुत्र कहावो। यह कह के परतीति गँवावो॥
व्याह सगाई करे न कोई। जाति पाँति में हलकी होई॥
होय अतीत जो घर के दुखिया। तू तो सब वस्तों करि सुखिया॥
हो फकीर भूखे अरु नागे। कै रोगी ऐबी निरभागे॥
माय बाप जाके नहिं मीता। लखि अधीन अप होय अतीता॥
लाज गँवाकर माँगत डोलें। दो भूखे को यों कहि बोलें॥
हाथ ठीकरा घर घर सोई। माँगत फिरें जो कुल की खोई॥
कुटिल वचन जु कहि कर देवे। येतो श्वान समान ही लेवे॥
भूठे सूखे टुकड़े बासी। देवे बिन आदर करि हाँसी॥
कोई गारी दे भिड़कारे। घर बाहर से मिचा डारे॥
पोर धँसे तो मारहि खावे। यह अतीत हो शोभा पावे॥
तुमहूँ देखो अपनी पोली। माँगे आय पसारे झोली॥

॥ दोहा ॥

अब सुत कभी न भाषियो, सुख से होन अतीत।
अजहू बहुतो ना सुनी, समझ हिये रणजीत॥

बीच मिले अरु बीच हि नासै । इनकी जानो झूंठी आसै ॥
संगी एक राम ही जानों । ताही को अपना करि मानों ॥
जीवत मरत न छोड़े साथी । साँचा जानों ताहि संगाती ॥
शठ नर ताहि संभारत नाँहीं । भूल्यो मोह ममता के माँहीं ॥
दुर्लभ मानुष देही पाई । हँस खेलन में ताहि गँवाई ॥
तन छूटा जब बहु पछताये । सुत पोते धन काम न आये ॥
फट रहि तिरिया हू अर्धंगी । चाली नहिं वह हू पति संगी ॥

॥ दोहा ॥

बाप ददा ताऊ चचा, स्वारथ के सब मीत।
अपने अपने सुख सगे, झूठे नाते प्रीत ॥ ॥

॥ चौपाई ॥

जीव अकेला जावे आवे । चौरासी में बहु दुख पावे ॥
जनम मरण की लागी बाटी । ओड़ न आवे विकटी घाटी ॥
जैसे करम करे सो संगी । दुख सुख भुगते अपने अंगी ॥
जाको नाम गाँव परनाली । कहा सु गिने जु जग में चाली ॥
पापी पुत्र भया कोउ मारा । सब कुल को ले नरक हि डारा ॥
आप गया अरु सब को खोया । परनाली का नाश जो होया ॥

॥ दोहा ॥

कुटुंब सघन के वनि रह्यो, पशु पक्षी नर माँहिं।
जेते नाते हैं सभी, कोऊ खाली नाँहिं ॥

॥ दोहा ॥

कुटुंब साज अरु भवन बनाया। मर कर कोउ न देखन आया॥
ज्यों झड़कर तरुवर से पाता। बहुरि न लागे वाके गाता॥
आसा रहे कुटुंब जा माँहीं। मुक्ति पंथ वह पावे नाँहीं॥
फिर फिर जग ही में तन धारे। आवागमन का बीज न जारे॥
चौरासी से प्रीति लगाई। मार जमों की बहु विधि खाई॥
छुटन उपाय किया नहिं तबही। मनसा देही पाई जबही॥
राव रंक दोउ ऐसे कहै। जग में नाम हमारा रहै॥
जिन कारण बहु बोझ उठावे। पचि पचि मरे नहीं सुख पावे॥

॥ दोहा ॥

बाप मुवा बेटा रहा, चले पिता की चाल।
जाना नहिं करतार को, फँसा कुटुंब के जाल॥

॥ चौपाई ॥

आपा मान बड़ा हो बैठा। जग व्योहार चतुर ही पैठा॥
सत संगत हरि भक्ति न जानी। पंच विषै बुधि रहे जु सानी॥

हृदय तिमिर रहै घन छायो। हरि पावन को पंथ भुलायो ॥
आवत मौत नहीं पहिचानी। माया मद पी भया अभिमानी ॥
अपनी जाति वरन औरेखे। आपन को ऊँचा करि पेखे ॥
राजस तामस उपजै दोई। कुटुंब सजे ऐसी विधि होई ॥
राजस सूँ बहु पाप कमावै। तामस नरक माँहिं लेजावै ॥
लागे करम सो फल भुगतावे। जूनी संकट फिरि फिरि आवे ॥

॥ दोहा ॥

राम भजन बिन ना छुटे, जनम मरन की व्याधि।
माता तुम भी हरि भजो, तज के जगत उपाधि ॥

॥ चौपाई ॥

दो इक दिन का जगत बखेरा। ना कोइ मेरा ना कोइ तेरा ॥
तीन भाव करि जगत बना है। प्रीत करन के वैर सना है ॥
करज भाव लिया या दीया। दुख सुख देकर बदल हि लीया ॥
समझे नाँहिं हिये के आँधे। मोह डोर ने सबही बाँधे ॥
मेरा मेरा कहते आये। कहत कहत फिर छाँड़ि सिधाये ॥
यह न किसी का कोई न इसका। हरि को भूला था यह जिसका ॥
प्रभु बिन कोइ न याको साथी। और सभी अन्तर के घाती ॥
अपनी अपनी औड़ लगावें। मुक्ति होन की राह भुलावें ॥
बहु विधि रोग बढ़ावन हारे। भीर पड़ें सब हो जा न्यारे ॥

राम संगाती नाँहि संभारा। महा अभागी मूल बिसारा॥
गरभ मांहि जिन रक्षा कीनी। तहाँ जीविका याको दीनी॥
जठर अगनि से याहि बचाया। अंग संपूरन बाहर लाया॥
दूध पहिले ही प्याय सु राखा। अन्न खाय जल पीय सुभाखा॥
बड़ा भये बहु विधि सुख दीना। याके कारन सब कुछ कीना॥
मेवा बहुतक भूषण नाना। अंग सुगंध पटंबर बाना॥
दस इन्द्रिन के न्यारे न्यारे। भोग सु या हित कूँ संचारे॥

॥ दोहा ॥

बाहन नाना भांति के, रत्थ और चंडोल।
हाथी घोड़े ही किये, देही दई अमोल॥

॥ चौपाई ॥

बुद्धि दई अरु किया सयाने। हेतु यही जो मोको जानें॥
समरथ किया भजन के काजा। इन प्रभु भूल कुटुंब ही साजा॥
सो याके कछु काम न आवे। करम लगा बहु विधि दुख पावे॥
जिन सों लगा रहे निशि यामा। चेत भजे नाँहीं सुखधामा॥
ताहि बड़ा अपराधी जानों। कृत्यघनी अघरूप पिछानों॥
वाका नाँहि निहोरा माना। धंधे भूख नींद सुख साना॥
अंत समय पछितावा करिहै। जम मारे लै आगे धरिहै॥
रणजीता कहि माय सुभागी। हरि सूँ सन्मुख सो बड़भागी॥

॥ दोहा ॥

सिमटि लगे हरि ओर ही, जग से नाता तोड़।
पाँच इन्द्री के स्वाद से, मन को लावे मोड़॥
मोह कुटुंब परिवार ही, मोह दरब अरु नार।
नेह न काहू से करे, बँधे न जग व्यौहार॥

॥ चौपाई ॥

जो कोइ बुद्धि बड़ी ही पावे। जग बंधन फंदन छिटकावे॥
जाको चिंता सोच न व्यापे। हो निश्चिंत लगो हरि जापे॥
जो कोइ हरि को ध्यान हि धारे। आप तरे बहु कुल निस्तारे॥
फिर जग जनम होय नहिं वाको। आवागमन मिटे जो ताको॥
भव सागर डर सकल निवारे। आप तरे औरन को तारे॥
विरक्त होय तजै जग आसै। छूटे सबै जगत की फाँसै॥
हो निहकर्म जो आनद पावे। जगत वासना सभी भुलावे॥
शीतल चित्त भयो हरषावे। परमानंद रस में छकिजावे॥

॥ दोहा ॥

ऐसे होय फकीर ही, साधू और अतीत।
चाह न इन्द्रहि लोक लों, मात करो परतीत॥

॥ चौपाई ॥

लोक परलोक न आशा कोई। नित निहइच्छ रहैं जन सोई॥
मगन रहैं तुरिया पद माँहीं। देह ममत्व जिन को कछु नाहीं॥
कारण कौन जु भिक्षा माँगे। हाथ जो ओटे काहू आगे॥
कोई कामना मन नहिं लावे। सो क्यूँ भीख माँगने जावे॥
आठ सिद्धि ठाढ़ी तिन आगे। कैसे भिक्षा माँगन लागे॥
छत्रपती से चाह न धरही। ते काहे को जाँचत फिरही॥
सब को तज कर न्यारे होऊ। सो क्यों हाथ पसारे दोऊ॥
वे जु भिखारी हरि दर्शन के। ठुकरायें नारी सुत धन के॥

॥ दोहा ॥

जिनको कहो फकीर तुम, सो हैं ये कंगाल।
घर घर ही माँगत फिरें, कर्महीन बेहाल॥

॥ चौपाई ॥

बुरे हाल कोइ माँगत डोलें। पराधीन दीन हो बोलें॥
कहें कि टुकड़ा दीजो माई। भूखा हूँ तुम्हारी शरनाई॥
पत्र झोली गह माँगन धावें। उदर काज बहु स्वाँग बनावें॥
कोई जान करज का मारा। कै कोइ मान जुवे का हारा॥
कोई जटा कोइ मुंडिया नागे। कोइ कपड़े रंग माँगन लागे॥
द्रव्य हीन कै जग दुख पाया। कै कोइ पाप देह दुख लाया॥

कै कोइ नारि बुरी तज जावे। काहू के तन रोग सतावे॥
कोऊ लत लागे बौराये। होय निखट्टू माँगन आये॥

॥ दोहा ॥

पेट काज तन भेष धरि, माँग सु पालें देह।
चिंता नहिं परलोक की, हरि सूँ नाहीं नेह॥

॥ चौपाई ॥

साधुन को ऐसा मत जानों। उनके सम इनको मत ठानों॥
उनके धन संतोष सदा है। कंगालों के शोक बँधा है॥
वे तो जानो राम पियारे। ये दीखें करमों के मारे॥
हरिजन मुक्ति धाम ही पावें। ये चौरासी में भरमावें॥
उनके सब जग पूजै पाँई। ये तो घर घर झिड़की खाईं॥
वे तो तारन तरन कहावें। ये भव सागर गोता खावें॥
उनकी पटतल ये क्यों होवें। जिनके चरण भूप ही धोवें॥
ऊँचा मारग देवन सेती। स्वर्ग फलन से ना कछु हेती॥
हरि के विरही अति मतवारे। आठ सिद्धि नव निद्धि विसारे॥
चहँ सेव वे ये मुख मोड़ी। सुरत लगी जिनकी हरि ओड़ी॥

॥ दोहा ॥

बड़े भाग उनके लखो, घर तजि होयँ फकीर।
और चाह उनको नहीं, हरि दरशन की पीर॥

पुत्तर के सुन ये वचन, माता रही हिराय ।
मोप मानु हिरदै जगो, रोम रोम सुख पाय ॥

॥ चौपाई ॥

हरष हरष फिर बोलन लागी । सुनि हो पुत्र महा सुभागी ॥
कैसो भयो जु ऐसो गुनिया । गुरु ना सेया कथा न सुनिया ॥
मैं तो मन में अचरज माना । ऐसा ज्ञान कहाँ से आना ॥
मेरे हिय का धोका भाजा । तुम प्रगटे मम तारन काजा ॥
तुम हो कृष्ण अंश अवतारी । तातें उज्वल बुद्धि तुम्हारी ॥
जनम सुपन की अब सुधि आई । जन्म पत्र की लिखी सो पाई ॥
ऊँची परालब्ध हम पाये । ताते तुम मम पुत्र कहाये ॥
दोऊ कुल जेतक हैं सारा । भव सागर से करिहो पारा ॥

॥ दोहा ॥

समझ भई कुंजो हिये, जभी कहे ये बैन ।
जोगजीत यों कहत है, मो मन को सुखदैन ॥

॥ चौपाई ॥

जब रणजीत कही सुन माता । यह सब तुम्हरा ही परतापा ॥
चौरासी भरमत ही आयो । अब के जनम तुम्हारे पायो ॥
ऐसा उज्वल भाग भया है । तातें निरमल ज्ञान लया है ॥

दूध पिया भूँठन जो खाई। बुद्धि मँजी उज्वल हो आई ॥
गोद खिला बोलन सिखलाया। यातें हिय हरि जाप दृढ़ाया ॥
तीन भाँति कर मोको पाला। बड़ा किया हो बहुत दयाला ॥
तुम्हरी किरपा माय सुभागी। हरि की भक्ति हृदय में जागी ॥
अब मोपे यह दया करीजे। सकल विकल मेरी हर लीजे ॥

॥ दोहा ॥

जग से मोहि छुड़ाय के, हरि की ओर लगाय।
कुटुंब बंधु के फन्द में, सुत को नाँहि फँसाय ॥

॥ चौपाई ॥

जा को पाल बड़ा जो कीजे। सो डायन के कर नहिं दीजे ॥
वह बस करके भक्ति छुड़ावे। सरवस खोय नरक ले जावे ॥
जो तुम को है पीर हमारी। व्याह सगाई करो निवारी ॥
मुल्ला के नहिं पढ़न विचारो। मोकूँ मती सोच में डारो ॥
यही सीख दो ऐसा करिहों। निश दिन नाम धनी उर धरिहों ॥
नवधा भक्ति करूँ मन लाई। रहूँ सदा सतसंगत माँहीं ॥
विना भजन नहिं और उपाऊँ। कै तुमरे नित दरशन पाऊँ ॥
बालपने महापुरुष मिलाये। भक्ति दान वर उनहूँ धाये ॥

॥ दोहा ॥

तुम हू जानत हो सबैं, खेलत लड़कन साथ।
मोको ले गये बड़ तले, राख्यो मस्तक हाथ॥
माँ मंदालस ध्रुव ही, गोपीचन्द फरीद।
सुत तारे उपदेश करि, चार जु हो तुम धीर॥

॥ चौपाई ॥

तब माता बोली मैं जानों। सिद्ध ने कही यही पहचानों॥
औरो जन्म पत्र के माँहीं। गृहस्थ होन के लच्छन नाहीं॥
अब मेरे मन साँची आई। करूँ न तेरी व्याह सगाई॥
अरु मुल्ला के नाहिं पढ़ाऊँ। तेरी कही सो ही उर लाऊँ॥
अब सुत दृढ मन भयो निरधारू। जगत बन्ध में तोहि न डारूँ॥
तैं जो कही मैं उर धर लीनी। तोहि भावती आज्ञा दीनी॥
अब सुन लो यह वचन हमारा। उलटा तुम मति दीजो डारा॥
मो जीवत दग आगे रहियो। मेरा संग छाँडि मत जइयो॥

॥ दोहा ॥

भक्ति हमारे ढिंग करो, देखूँ करूँ हुलास।
बसियो नाहीं बन गिरिन, करियो निकट निवास॥

॥ दोहा ॥

देख जु हिरदा नैन सिरावे । सुनि सुनि वचन कान सुख पावे ॥
मोहू पे तुम भक्ति करावो । मुक्त होन लच्चण समभावो ॥
मो लायक कोइ ध्यान बतावो । किरपा करि सुत मोहि चितावो ॥
कै मोहि सेवा पूजा दीजे । नाम धनी कहो ज्यों कर लीजै ॥
मैं अज्ञान कछू नहिं जानी । हरि ओड़ी से रही अयानी ॥
चेतन भई ज्ञान सुनि तेरा । अब लह्यो जग जंजाल बखेरा ॥
राम भजन बिन नहिं छुटकारा । जीव न उतरे भव जल पारा ॥
चौरासी में भरमत आयो । नरक माँहिं बहुते दुख पायो ॥

॥ दोहा ॥

आज वचन तोसों कियो, पूरी गह मन टेक ।
जगत बखेरे छाँड़ि सब, सुमरूँ हरि हरि एक ॥
वचन तुम्हारे साँच ले, हिय में धरे सुहात ।
काहू की मानूँ नहीं, कोटि कहो क्यों न बात ॥

॥ चौपाई ॥

सुनि रणजीत हिये हुलसायो । माता के चरणों शिर नायो ॥
उठि परकम्मा देने लागे । कहि मन माँहिं मनोरथ जागे ॥
करि प्रणाम फिर बैठे सोही । होय मुदित कर जोड़े त्योंही ॥

सदा रहूँ जननी तुम संगा। रहि नियरे करूँ भक्ति निसंगा॥
तुम चरणन की छाया रहिहूँ। तुमसे जुदा होय नहिं जइ हूँ॥
जो कहिं हमको जाना होई। शीघ्र हि आवूँ तुम पे सोई॥
सत्संगत में जो रहि जाऊँ। सुरत तिहारी ना बिसराऊँ॥
जो मैं जाऊँ इत उत कित ही। शिर मम हाथ राखियो नितही॥

॥ दोहा ॥

माता सुत इकमन भये, एक मता इक नीति।
जगत कुटुंब से सहज हित, दृढ करि हरि में प्रीति॥

॥ चौपाई ॥

माता कही सुनो हो लाला। बहुत भाँति मोहि कियो निहाला॥
अब मैं तोहि दीनीं मुक्ताई। हरि प्रिय करो जु अप मन भाई॥
बैठो चलो जहाँ मन भावे। खेलो खेल जोइ चित आवे॥
चाहो हरि भक्तन में जावो। कथा सुनो चहो ध्यान लगावो॥
सुरत होय सोइ खेलो खावो। लड्डू चकई पतंग उड़ावो॥
बालपने के चरित दिखावो। हिरदै हरि की भक्ति दृढ़ावो॥
मन को हरप शान्ति अब आई। हिरदै में भइ शीतलताई॥
इमि कह करि उर लियो लगाई। रणजीता परनाम सुनाई॥

॥ दोहा ॥

जोगजीत वा बार पर, बार बार बलिजाय ।
कुंजो गई नीचे उतर, मां ने लई बुलाय ॥

॥ चौपाई ॥

रणजीता हू नीचे आये । करि भोजन बाहर को धाये ॥
मंद मंद होंठन मुसकावें । भये मनोरथ अति हरषावें ॥
निरबंध भये खुशी मन आनी । बंधन छूटि गये अब जानी ॥
शरण आय तिन बंध नशावें । सो कैसे बंधन में आवें ॥
जीवत मुक्ता परम हुलासी । कैसे सहे जगत की फाँसी ॥
स्वतंत्र होय घर बाहर डोले । सबही से हँसहँस मुख बोले ॥
वबहू गलियारे में आवे । देखि तमाशे ज्ञान उपावे ॥
करन लगे जो अपनी भाई । अटक गई आनंद उपजाई ॥

॥ दोहा ॥

बरस आठवें की कही जुदी जुदी सब खोल ।
जोगतीत पुनि बरणि है, नवें बरस की बोल ॥

❁ श्री महाराज के भक्ति प्रभाव व प्रेम अवस्था का वर्णन ❁

॥ चौपाई ॥

बड़ी पोल सूँ कूचे माँहीं । आवन लगे जु नीके ह्याँहीं ॥
मस्तक टीका कर में माला । मुख सों जपैं श्री कृष्ण गुपाला ॥
कबहू बैठें आय बजारा । दो चाकर रहैं तिनके लारा ॥
भूखा देखि यही मन लावें । पैसे काहू अन्न दिवावें ॥
काहू को लै देहिं मिठाई । ऐसे दयावन्त सुखदाई ॥
देख वैष्णव शीस नवावें । आदर करि के ताहि बिठावें ॥
कहैं कि हरि की चरचा कीजे । मोको कछु उपदेश करीजे ॥
कबहु न खेलें लड़कन माँहीं । बैठें नहिं जा उनके ठाँहीं ॥

॥ दोहा ॥

कबहू बैठें भवन में, आसन पद्म लगाय ।
राखें मन हरि पद जहाँ, इंद्रिय सब सिमटाय ॥

॥ चौपाई ॥

कथा होय नाना के आगे । हित सों श्रवण करें अनुरागे ॥
कथा माँहिं आवें जो कोई । इनकी ओर निहारैं सोई ॥
आपस में सब बात चलावें । इनको परम भक्त ठहरावें ॥
नाना कहैं जु हँस कर इनकी । कथैं सगाई लीला तिनकी ॥

स्तूती सुनकर बहु हुलसावें । भाग बड़े हम दरशन पावें ॥
नाना भी था हरिजन सूचा । एक पहर नित पूजा रूचा ॥
पूजा करि करते कछु दाना । बहुरि पहरते वागा बाना ॥
माँहि पालकी हो असवारा । जाते अपने ही दरबारा ॥
राय भिखारी दास कहावें । शोभा बड़ी जगत में पावें ॥
बहादुरपुर इक दिल्ली माँहीं । सदाबरत नित दोय चलाई ॥

॥ दोहा ॥

दयावन्त दाता बड़े, करते बहु उपकार ।
लिये रहें हरि भक्ति को, लगा न जगत विकार ॥

॥ चौपाई ॥

रणजीता के नाना वेही । हित बहु करते इन पर तेही ॥
इनको तरफ देख मुसकाते । बहुत प्यार करि पास बिठाते ॥
हरि की चरचा सुनते कहते । लखि बालक अचरज में रहते ॥
जो भीतर जावे औतारी । होय मुदित ढिंग आ तिन्ह नारी ॥
उनको हरि की ओर लगावें । पाप पुन्य को खोल सुभावें ॥
हरि चरचा के रँग में भेवें । माला जपने की दृढ़ देवें ॥
जितने थे नाना के चाकर । उनमें भक्ति जु उपजी आकर ॥
बाहिर भीतर ही के माँहीं । हरि हरि जपन लगे सब ठाँहीं ॥

* श्री महाराज के भक्ति प्रभाव व प्रेम अवस्था का वर्णन *

॥ चौपाई ॥

बड़ी पोल द्व कूचे माँहीं । आवन लगे जु नीके ह्याँहीं ॥
मस्तक टीका कर में माला । मुख सों जपें श्री कृष्ण गुपाल ॥
कबहू बैठें जाय बजारा । दो चाकर रहें तिनके लारा ॥
भूखा देखि यही मन लावें । पैसे काहू अन्न दिवावें ॥
काहू को ले देहिं मिठाई । ऐसे दयावन्त सुखदाई ॥
देख वैष्णव शीस नवावें । आदर करि के ताहि बिठावें ॥
कहें कि हरि की चरचा कीजे । मोको कछु उपदेश करीजे ॥
कबहु न खेलें लड़कन माँहीं । बैठें नहिं जा उनके ठाँहीं ।

॥ दोहा ॥

कबहू बैठें भवन में, आसन पद्म लगाय ।
राखें मन हरि पद जहाँ, इंद्रिय सब सिमटाय ॥

॥ चौपाई ॥

कथा होय नाना के आगे । हित सों श्रवण करें अनुरागे ॥
कथा माँहिं आवें जो कोई । इनकी ओर निहारै सोई ॥
आपस में सब बात चलावें । इनको परम भक्त ठहरावें ॥
नाना कहैं जु हँस कर इनकी । कथै सगाई लीला तिनकी ॥

स्तूती सुनकर बहु हुलसावें । भाग बड़े हम दरशन पावें ॥
नाना भी था हरिजन सूचा । एक पहर नित पूजा रूचा ॥
पूजा करि करते कछु दाना । बहुरि पहरते बागा वाना ॥
माँहि पालकी हो असवारा । जाते अपने ही दरबारा ॥
राय भिखारी दास कहावें । शोभा बड़ी जगत में पावें ॥
बहादुरपुर इक दिल्ली माँहीं । सदावरत नित दोय चलाई ॥

॥ दोहा ॥

दयावन्त दाता बड़े, करते बहु उपकार ।
लिये रहें हरि भक्ति को, लगा न जगत विकार ॥

॥ चौपाई ।

रणजीता के नाना वेही । हित बहु करते इन पर तेही ॥
इनकी तरफ देख मुसकाते । बहुत प्यार करि पास बिठाते ॥
हरि की चरचा सुनते कहते । लखि बालक अचरज में रहते ॥
जो भीतर जावे औतारी । होय मुदित ढिंग आ तिन्ह नारी ॥
उनको हरि की ओर लगावें । पाप पुन्य को खोल सुभावें ॥
हरि चरचा के रँग में भेवें । माला जपने की दृढ़ देवें ॥
जितने थे नाना के चाकर । उनमें भक्ति जु उपजी आकर ॥
बाहिर भीतर ही के माँहीं । हरि हरि जपन लगे सब ठाँहीं ॥

॥ दोहा ॥

नवें बरस की जो कथा, परगट दई सुनाय ।
अब दसवें की कहत है, जोगजीत चितलाय ॥

॥ चौपाई ॥

दिन दिन बुद्धि भई कुछ औरे । आवन जान लगे सब ठौरे ॥
कभी जमुन जा बागन माँहीं । इक चाकर संग छोड़े नाहीं ॥
साधु संत सों मिलें सु जाके । खुशी होय कर दरशन बाके ॥
ठाकुर द्वार करें जा प्रीती । पूजन सेव करें बहु नीती ॥
कबहू हरि भक्तन के पासा । बैठें बचन कहें सुखरासा ॥
होय जागरन जित ही जावें । कथा कीरतन सुनि हरषावें ॥
हरिजस लीला सुनें सुनावें । जगत कहानी नाहिं सुहावें ॥
माता पास सितावी जावें । ज्यों वे मन में दुख नहि पावें ॥

॥ दोहा ॥

कै बैरी कै मित्र ही, अपना और पराय ।
तन कर मन कर बचन कर, सबही के सुखदाय ॥
ऐसे करते भक्ति ही, दशा भई कछु और ।
बरस ग्यारवें में लगे, प्रेम उठा घनघोर ॥

॥ चौपाई ॥

प्रेम पीर उपजी हिय माँहीं । बढ़ती चली सभी तन छाई ॥
प्रेम पीर नहिं छिपे छिपावे । मुख द्वारे हो बाहर आवे ॥
विरह चुगल कह देवे आगे । नैनन माँहीं झलकन लागे ॥
बरस बारवें नेम सु छूटा । प्रेम अपरबल जगा अनूठा ॥
भरे रहैं जल ही सू नैना । विरह तपत से बोलत बैना ॥
जग सू भये रहैं बैरागी । नेह अगनि हिरदे में लागी ॥
दिन नहिं भूख नींद निशि नाहीं । हरि का मिलन सोच मन माँहीं
सूखे होठ बदन रहे पीरा । बिना दरश मन धरे न धीरा ॥

॥ दोहा ॥

कबही उठे उसास ही, ता मधि निकसे हाय ।
बात सुने जो प्रेम की, नैनन नीर बहाय ॥

॥ चौपाई ॥

घर के मनुप कहैं लखि ऐसी । इनकी दशा भई अब कैसी ॥
कोइ कहै तुम बैद बुलावो । या लड़के को ताहि दिखावो ॥
पावे रोग औषधी देवे । याही को नीका करि लेवे ॥
कोइ कहै कछु छाया जोई । ताते याकी यह गति होई ॥
कै बभूत जंतर कों लावो । कै कोइ स्याना वेगि बुलावो ॥
भटकत फिरैं कुटुम्ब के लोई । मरम लहै नहिं याका कोई ॥

कहँ बाप याका था बौरा । जाका अंश भया यह छोरा ॥
तातें यह बौराय गया है । बौरे का बौरा हि भया है ॥
नाना पूछि इन वचन बखानी । कहे इनकी वेदन हम जानी ॥
ये हरि दरस प्रेम मतवारे । कहहुँ कि जो यह निश्चय धारे ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम व्यथा रणजीत की, जोगजीत कहे भास ।
विरह लगा हरि दरस का, याते रहें उदास ॥

॥ चौपाई ॥

रात दिना रटना ही लागी । बुद्धी प्रभु पद में अनुरागी ॥
मुख सों बोले अकबक बानी । प्रेम पंथ की यही निशानी ॥
तन व्याकुल अरु मन नहिं हाथा । जाय लगा हरि जी के साथा ॥
श्याम दरस की चिंता भारी । आतुरता नहिं जाय सँभारी ॥
साधु संत ही के ढिंग जावे । हाथ जोड़ के शीस नवावे ॥
पूछत छाती भर भर आवे । कहो श्याम कैसे दरसावे ॥
ऐसे कह कर रोवन लागे । हृदय शान्ति न विरह दुख भागे ॥
जो कोई इन ओरी देखे । वाकी भी गति यही विशेषे ॥

॥ दोहा ॥

पाँच बरस इहि भाँति ही, बीते प्रेम मँझार ।
यही रही अवसेर ही, देखूँ कृष्ण मुरार ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिना सत संगत माँहीं । कथा होत थी वाही ठाँहीं ॥
तहाँ जाय पहुँचे रणजीता । साँचे प्रेमी हरि के मीता ॥
कथा समापति जबही भई । सबही श्रोतन चरचा लई ॥
अपनी अपनी समझ बखानी । कहत भये जैसी जिन जानी ॥
ज्ञान भक्ति वैराग बखानो । निंदत किये धर्म जो आनों ॥
औतारी आनंद भरि तिनसों । एक प्रसंग पूछत भये तिनसों ॥
सबही श्रोता सुघर सयाने । मेरी अरज सुनो दे कानें ॥
कैसे श्याम मिलें दुख जावे । जासूँ हिरदा नैन सिरावे ॥

॥ दोहा ॥

यही भेद मोसूँ कहो, मन की शंका जाय ।
जतन करूँ मैं ताहि को, पूरी टेक लगाय ॥

॥ चौपाई ॥

यों कह रोम सभी उठ आये । नैन दोऊ अँसुआ भरि लाये ॥
सुबकी ले ले रोवन लागे । अचरा देकर आँखिन आगे ॥
सबने प्रेम दशा पहचानी । इनकी आतुरता ही जानी ॥
धन्य धन्य कह करि यों बोले । तुम्हरा देखा प्रेम अतोले ॥
यही जु श्याम मिलावन हारा । निश्चय मानों वचन हमारा ॥
और कहो तुम काके बारे । कौन पुरुष हैं गुरू तुम्हारे ॥

रोनन में यह उत्तर दीना । अब ताँई हम गुरू न कीना ॥
सब कहँ सतगुरु शरणे आवो । जिनकी किरपा दरसन पावो ॥

॥ दोहा ॥

गुरु बिन मारग ना मिले, गुरु बिन भरम न जाय ।
दुर्लभ हरि सतगुरु बिना, गुरु करि पूजो पाँय ॥

॥ चौपाई ॥

यों सुनके रणजीत गुसाँई । अपने मन में निश्चय लाई ॥
उनका कहा साँच ही माना । ढूँढ़ करूँ गुरु योंही ठाना ॥
करूँ सिताब गुरू जो पावें । तब वे मोको राम मिलावें ॥
ता दिन से बुद्धि हि पलटाई । सतगुरु खोजन चित लगाई ॥
कहाँ सतगुरु कैसे करि पाऊँ । जिनसूँ अपनी व्यथा सुनाऊँ ॥
सतगुरु मिलें तो कृष्ण मिलावें । मो नैनन की जलन बुझावें ॥
सतगुरु बिन कछु और न भावे । घर बाहर कछु नाँहिं सुहावे ॥
बढ़ो विरह कछु कहयो न जाई । डारो काठ अगनि ज्यों माँहीं ॥
तन व्याकुल मन परे न चैना । भूख प्यास नहि लागे नैना ॥
आतुर होकर ढूँढ़न लागे । सतगुरु मिलन चाह अनुरागे ॥

॥ दोहा ॥

शैव देखि अरु वैष्णव, विरक्त नागों माँहिं ।
मत मारग देखे घने, मन अटक्यों कहिं नाहिं ॥

॥ चौपाई ॥

सबको देख देख कर हारे । पूरे सतगुरु नाहि निहारे ॥
साधु संत को शीस नवावें । दो अशीस कहिं सतगुरु पावें ॥
दिल्ली ही के बाहर जाकर । फिर बागों ढूँढ़े हित लाकर ॥
नान्हें भये सबन सों बोलें । अरु सब के मत ही को तोलें ॥
चरचा करि करि भेद निहारें । पर काहू को लखे न भारे ॥
तब वहाँ गहरे लेहि उसासें । अपना भेद नहीं परकासें ॥
ऐसा दृष्टि न आवे कोई । श्याम मिलाय हरे दुख सोई ॥
अधिकी तपत उठी मन माँहीं । असन बसन तन कछु सुधि नाहीं॥

॥ दोहा ॥

रात दिवस मन में रहे, सतगुरु ही को ध्यान ।
यही अरज करते रहें, वेगि मिलो सुखदान ॥

॥ चौपाई ॥

कहँ रणजीत विरह दुखदाई । कछु न मोहि जग वस्तु सुहाई ॥
मिलें सतगुरु मोहि अन्तरजामी । तब मो मन पावे विसरामी ॥
क्यों नहिं अरज सुनत गुरु मोरी । बालक अबुध शरण हों तोरी
गुरु को विरह लगो दुखदाई । देखि दशा कहि लोग लुगाई ॥
अति सुन्दर यह काको बाला । महा जु दुख करि फिरत विहाला
बैठे जहाँ तहाँ घिरि आवें । पूछें व्यथा मरम नहिं पावें ॥

ल्या ल्या धरैं जु भोजन साँमाँ । कहँ रहो कोइ दिन हम धामा ॥
रणजीता तन सुरति बिसारी । कभु पुर वन कभु फिरैं उजारी ॥

॥ दोहा ॥

चलते फिरते सोवते, सतगुरु ही को ध्यान ।
जैसे मीना जल बिना, तलफत निशिदिन प्रान ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु खोजत द्वै बरस बिताई । उन्नीसवों तब लाग्यो आई ॥
सतगुरु हित यों व्रत सजावें । इक दिन निरजल इक दिन खावें ॥
पुनि दो दिन निरजल व्रत ठानी । तीजे दिन ले अन्न अरु पानी
चार दिनाँ फिर रह निरधारा । पँचवे दिन जल अन्न अहारा
सधत सधत यों साधो प्रेमा । पखवारे तक निरजल नेमा ॥
गंगा तट जा बैठ रहाये । सतगुरु हित चह्यो देह तजाये ॥
करत करत पुनि ऐसो कीनों । गंगाजल पी अन्न तज दीनों ॥
तब शुकदेव अनुग्रह छायो । ध्यान माँहिं आ दरश दिखायो ॥

॥ दोहा ॥

शुकदेव कहि रणजीत सों, शुक्रताल ही स्थान ।
जोगजीत जहाँ आइये, प्रगट मिलैं गुणदान ॥

(इति श्री रणजीत शुकदेव ध्यान दरसणों नाम दशमो विश्रामः)

अथ प्रगट मिलन वर्णते

॥ चौपाई ॥

वचन सुने अरु मूरत ध्याने । रणजीता आनंद समाने ॥
अति भूखे जनु न्योता दीनों । नाना व्यञ्जन ही को चीन्हों ॥
चिन्तामणि ज्यों रंक दिखाई । अति धनाढ्य ताहि देन कहाई ॥
चात्रक सीप स्वाँति वरपाई । देख जु मन माँहीं हरपाई ॥
यों रणजीत मनहिं हुलसाने । ध्यान माँहिं शुकदेव लखाने ॥
बरस उन्नीस के भये सुखरासी । संवत् सत्रासो उन्नासी ॥
चैत शुक्ल पच्छ एकम जानों । पहर तीन दिन बीते मानों ॥
वृहस्पतिवार वार शुभदाये । रणजीता शुकदेव मिलाये ॥

॥ दोहा ॥

तहँ सों उठ रणजीत जी, धाये श्री शुकतार ।
गंगा तट शुकदेव मुनि, राजत जहँ सुखसार ॥

॥ चौपाई ॥

जहाँ शुकदेव कथा विस्तारी । परीचित हित भागोत उचारी ॥
ताहि सुनाय कियो भवपारा । यातें नाम जु श्री शुकतारा ॥
ठौर पुनीत परम सुखदाई । पूजन जोग ऋपिन मन भाई ॥
कृष्ण भक्ति की देने वारी । फल दायक लायक शुभकारी ॥

अड़सट तीरथ माँहिं अनूपा । मो भाये बैकुंठ सरूपा ॥
तीरथ इष्ट हमारो सोई । श्री शुकतार कहावे जोई ॥
यही जो गुरू स्थान हमारा । जोगजीत ता पर बलिहारा॥
आये तहाँ रणजीत पियारे । गंगा तट शोभित छविभारे॥

॥ छप्पय ॥

श्री शुकतार परम पुनीत अति, वन बेलि वृत्त सुहावने ।
जहाँ पवन मंद सुगंध शीतल, खग मृग शब्द जु भावने ॥
तहाँ बहत गङ्गा निकट ही न्हा, न्हाय अधम जु बहु तरे ।
विराजत जहाँ शुकदेव मुनि, रणजीत तिन दरशन करें ॥

॥ दोहा ॥

शुकदेव छवि कहा कहि सके, मो बुधि अति हि अपंग ।
छवि हू छवि बरणत थके, परमानंद सुखकंद ॥

॥ गायन छंद ॥

फटिक शिल पर बैठे शुक, दुख हरण कृपा निधान ही ।
कोटि इन्द्र से भूप सम ना, दें अभय पद दान ही ॥
नील मणि सम दिपत अंग छवि, कहि न जात बखान ही ।
जोगजीत रणजीत को लखि, मृदु मृदु मुसकात ही ॥

॥ दोहा ॥

उच्च टीले पर राजहीं, व्यास सुवन सुखदैन ।
रणजीता छवि देख तिन, सुफल किये अप नैन ॥

॥ चौपाई ॥

शोभा वरण सकूँ नहिं जिनकी । अधिक रूप अद्भुत छवि तिनकी
बैठे लघु तरुवर की छाये । भूषण वस्त्रन रहित सुहाये ॥
नव योवन अंग अंग छवि सोहै । मधुर शरीर साँवरो जो है ॥
आसन पदम ध्यान छवि छाये । नासा आगे दृष्टि लगाये ॥
शीस बावरी घूँघर वारी । सब तन पुष्ट महा छवि भारी ॥
दीरघ नैन दोऊ रतनारे । कृष्ण रूप रस मत्त खुमारे ॥
वदन चन्द की शोभित कान्ति । रवि शशि मंद किरन लखि शांति
गोल भुजन कर पर कर दीये । पिंडलि ऊपर जोर सु लीये ॥
वक्षःस्थल उच्च छवि कहा गाऊँ । शोभा सिन्धु कहत थकि जाऊँ
नाभि गहर कटि केहरि जैसी । उपमा देत लजत बुधि ऐसी ॥

॥ दोहा ॥

चरण कमल सुन्दर महा, जंघन ऊपर जोट ॥
नखशिख छवि शुकदेव की, कहत थके कवि कोट ॥

॥ चौपाई ॥

शुकदेव जहाँ सेती दरशाये । साष्टांग रणजीत कराये ॥

फरत फरत जब ही नियराये । रूप राशि लखि मोद बढ़ाये।
दाहिन अंग प्रदक्षिणा धाये। चरण माथ धरि नैन सिराये।
पुनि दोऊ कर जोरि खराये । सकुचि नेत्र पलकन ढरकाये।

॥ दोहा ॥

जाने मन रणजीत ये, हैं श्री त्रिभुवनराय ।
अथवा कोई परम मुनि, सब सुख इन्हें लखाय ॥

॥ चौपाई ॥

नीची पलक आँख भरि लाये । दीन शरीर किये शरमाये।
महापुरुष जब देखे ऐसे । नख सिख सकुच दीनता जैसे।
आज्ञा दे हित सों बैठाये । देखि दशा होठन मुसकाये।
पूछी कहो अप दशा उचारी । कैसे तुम हो रहे दुखारी॥
कौन बरन बालक हो किसके। कौन देश वासी तुम जिसके॥
कौन वासना भरमत डोलो । हमसों अपना अन्तर खोलो॥

॥ दोहा ॥

वे तो जानत थे सबै, पूछा होय अजान ।
जोगजीत या चौज पर, तन मन वारे प्रान ॥

॥ चौपाई ॥

सुनि रणजीत हिया हुलसायो । कर जोरे तल शीस नवायो॥

पुनि मन थपी नहीं शरमाऊँ । अपनी वेदन सबै सुनाऊँ ॥
सकुच लिये बोलन ही लागे । हाथ जोड़ उनही के आगे ॥
कही नाथ तुम सब कुछ जानों । मेरी दशा सभी पहचानों ॥
तुम अंतर की जाननहारे । पर तुम आज्ञा जाय न टारे ॥
जो यह आज्ञा भई तुम्हारी । तो अब अरज करूँ उच्चारी ॥
धुर सों बात बखानूँ सारी । जन्म भयो मेवात मँझारी ॥
डहरा अलवर ही के पासा । वहाँ सूँ दिल्ली आयो दासा ॥
दूसर जात हमारी जानों । च्यवन ऋषीश्वर सों पहिचानों ॥
नाम दास का है रणजीता । बालपने से हरि कियो मीता ॥

॥ दोहा ॥

महापुरुष मिल वर दियो, अरु पिछलो संस्कार ।
उपजी हिरदे भक्ति ही, छूटे जग व्योहार ॥

॥ चौपाई ॥

नेह लगो हरि चरणन माँहीं । प्रेम बढ्यो धीरज रह्यो नाँहीं ॥
दरशन कारण तरफै हीया । जोर विरह ने परबल कीया ॥
मन संकल्प करे कित जाऊँ । श्री कृष्ण कैसे दरशाऊँ ॥
एक दिनाँ साधन के माँहीं । हित करि जा बैठा जो वहाँ हीं ॥
चरचा में यह बात चलाई । बिन सतगुरु हरि दरशन नाहीं ॥
वादिन सों गुरु की लौ लागी । ढूँढे सन्यासी बैरागी ॥

मत मारग सब ढूँढ़ फिरानों । कहीं न मेरो मन पतियानों ॥
कहीं न देखा राम सँजोगी । मिला न को हरि दरशन भोगी ॥

॥ दोहा ॥

या कारण बन बन रमों, लगी रहे यह लाग ।
मन सोची गुरु ना मिले, करन थपो तन त्याग ॥
ध्यान मध्य दरशन दिये, लखि मोहि निपट अनाथ ।
अब प्रत्यक्ष दरशाय के, कीन्हों परम सनाथ ॥

॥ चौपाई ॥

अब तो परम भयो आनंदा । दरशन नैन परम सुखकंदा ॥
अहो प्रभू अब यह मन मेरे । सदा रहूँ चरणन के चेरे ॥
अब मोहि निज करि अपना कीजे । भेट करूँ यह मनसों लीजे
मेरी तो बुधि थी नहिं कोई । तुम को ढूँढ़ करे गुरु सोई ॥
दुर्लभ सतगुरु दरश तुम्हारे । तुम किरपा सों तुम्हीं निहारे ॥
यों कह कर भइ गदगद बानी । उमड़ प्रेम रहि बात थकानी ॥
विह्वल भये रोम उठि आये । तब गह करि भुज कंठ लगाये ॥
बाँह पकरि सम्मुख बैठाये । पहल मिलन को मरम बुझाये ॥

॥ दोहा ॥

बालपने गुरु मिल चुके, तब तोको सिख कीन ।
वाहि भुलाये ही फिरो, ढूँढ़त गुरू नवीन ॥

बाल अवस्था माँहि तुम, निकट आपनें गाँव।
लड़कन संग खेलत हुते, नदी किनारे ठाँव॥

॥ चौपाई ॥

रमता आया एक अतीता। तोको निकट बुलाय जु लीता॥
तो तन देख जु हँस करि हेरा। प्यार किया सिर पर कर फेरा॥
दोऊ भुज गहि कंध चढ़ायो। चलो दौड़तो हँसतो धायो॥
बैठो जा बड़ तल हुलसायो। काँधे सूँ तोहि गोद बिठायो॥
दो पेड़े कर माँहीं दीन्हें। दीनी भक्ति आपने कीन्हें॥
लोग तुझे ढूँढन को धाये। वे अलोप भये कहीं न पाये॥

॥ दोहा ॥

वा गुरु की पहिचान तुम, राखत कछु मन माँहिं।
मिल जावें जो अब कहीं, चीन्ह परे के नाहिं॥

॥ चौपाई ॥

अजीता चौंके सुधि आई। यह वह मूरत एक लखाई॥
ये ही वे हैं निश्चय कीन्ही। तब उठि पुनि परिकम्मा दीनी॥
करि दण्डौत खरे कर जोरे। उमँगि हिये आनँद झकझोरे॥
बार बार मुख स्तूती कीनी। कही कि किरपा करी नवीनी॥
लाय टकटकी मुख छवि हेरे। कही मनोरथ पुजवे मेरे—

बार बार निरखत मुसकावे । परमानंद हिये न समावे॥
दया करी सब दुख हर लीनो । दीन जान आ दरशन दीनो ॥
नातर मैं तुम कों कित पाता । बालक जान मिले मोहि ताता ॥

॥ दोहा ॥

तुम मिल कर ऐसी भई, रंक मिले बहु माल ।
जल बरषा ते ज्यों भरे, सूखा हुता जु ताल ॥

॥ चौपाई ॥

बालपने जब दरशन दीनो । तिमिर भजाय जु चेतन कीनो ॥
कृष्ण भक्ति हिरदे में जागी । निशिदिन हरि ही रटना लागी ॥
भई नाथ किरपा सब तोरी । नातर बुद्धि कहाँ थी मोरी ॥
मैं मति हीन महा अज्ञानी । तुम्हरी किरपा प्यार भुलानी ॥
बड़ तर बैठ वचन तुम बोले । वैसेहि किरपा करी अबोले ॥
अपना जान गही मम बाँहीं । चरण कमल की कीनी छाँहीं ॥
मोसों स्तुति कहा बनि आवे । बुद्धि कृपा को अंत न पावे ॥
तुम सब लायक मैं कछु नाँहीं । साँच कहत हूँ सुनो गुसाँई ॥

॥ दोहा ॥

ऐसे कहि कर जोरि कै, चरन परे शिर नाय ।
तब शुकदेव मुसकाय मुख, कर गहि लिये बिठाय॥

पुनि शुकदेव जु मुख उच्चारे । तुम हो अंश ईश अवतारे ॥
पतित जीव उद्धारन काजे । भव सागर में आय विराजे ॥
भक्ति बिगड़ती जबै निहारो । आन सँवारो धरि औतारो ॥
ऐसो बहुत बार तुम कीनों । भक्ति सँवारन को व्रत लीनों ॥
सत संगति करि पतित उधारे । भव सागर ते उतरे पारे ॥
भक्ति वेष तुम धर कर आये । हरि आज्ञा हम निरखन आये ॥
देखी तो वैसी गति सारी । जैसी निरमल भक्ति तुम्हारी ॥
दूसर कुल दइ उपमा भारी । तिन मधि लियो जु तुम औतारी ॥

॥ दोहा ॥

वैसे गुण लचण लखे, वैसा ही वैराग ।
प्रेम नेम वैसे सबै, वैसी हरि सों लाग ॥

॥ चौपाई ॥

यों सुन कर तबही सकुचाये । नीची पलक किये शरमाये ॥
कही कि मैं तो दास तुम्हारो । तुम चरनन में आपा डारो ॥
करत बड़ाई मोर गुसाँई । मैं या उपमा लायक नाहीं ॥
अब जानी अपना कर लीन्हाँ । लाड़ प्यार बहुते हित कीन्हाँ ॥
मात पिता ज्यों नन्हे पूत को । गोद खिलावें अपने सुत को ॥
नेह लाड़ करि देहिं बड़ाई । लोरी दे दे कहैं कन्हाई ॥
कभी कहैं मेरा राजा राना । बहुत भाँति कर कहैं बखाना ॥
यों अयान यह बालक तोरा । जो कुछ कहो कहा बस मोरा ॥

॥ दोहा ॥

मो में आपा है नहीं, दिया तुम्हारे हाथ ।
कै या दूर बगाय दो, कै रख चरनों साथ ॥

॥ चौपाई ॥

तुम ही तुम हो मैं नहिं नाथा । अब नीके मम पकरो हाथा ॥
यही मनोरथ पूरन करिये । गुरु दीक्षा दे सिर कर धरिये ॥
मोहि अतीत अपना शिष कीजे । जो भावे सो बाना दीजे ॥
मेरा विरक्त रूप बनाओ । भव सागर से बेगि छुड़ावो ॥
सकल विकल मो मन सों भागे । बिरह व्यथा कछु रहे न आगे ॥
अवधूता सुनि उत्तर दीन्हा । कहि तो सकल मनोरथ चीन्हा ॥
तुम जो कही मरम हम पाया । करिहूँ वही जो तो मन भाया ॥
पर तुम दीखो तन सों न्यारे । विषे वासना मन सों डारे ॥
जगत हेतु कछु दीखत नाँहीं । हरि की लगन लिये हिय माँहीं ॥
त्याग करन को जो तुम चाहो । त्यागोगे कहा मोहि बतावो ॥

॥ दोहा ॥

रणजीता जब यों कही, सुनि हो मेरे नाथ ।
यह सब किरपा है वही, धरा शीस पर हाथ ॥
जब मन पर किरपा करी, अब तन पर करि लेहु ।
जाति बरण कुल ना रहे, छवि अतीत की देहु ॥

॥ चौपाई ॥

सनमुख हो ले बैठे पासा । लगे करन को अपना दासा ॥
मरियादा की सब विधि कीन्हीं । पहिले अपनी पूजा लीन्हीं ॥
रणजीता पै चरण धुवाये । तन मन संकल्प भेट लिवाये ॥
इनही से कंकर घिसवाया । अपने मस्तक तिलक कराया ॥
नूतन कंठी कर में आई । रणजीता के गल पहराई ॥
भाल जु श्री टीका कर दीया । ज्योति झिलमिली नाम सु लीया ॥
चार नाम कहि दीये जाके । मस्तक भाल लगावे ताके ॥
चूड़ामणि मन्तर उच्चारो । महाराज सुनि हिय में धारो ॥

॥ दोहा ॥

फिर नित नेम बताइया, सब विधि सों समझाय ।
जैसे उन इनसे कह्यो, त्यों अब देहुँ सुनाय ॥

॥ चौपाई ॥

करि जु स्नान आसन बैठीजे । मन को रोक इकांत करीजे ॥
पहिले गुरु का कीजे ध्याना । सब ध्यानन में यह परधाना ॥
जब गुरु की मूरति बनि आवे । माथे मन कर तिलक चढ़ावे ॥
फूल माल गल में पहरावे । धूप दीप नैवेद्य चढ़ावे ॥
करि दण्डोत परिक्रमा दीजे । फिर ठाढ़ो होय स्तुती कीजे ॥

कहे शरण मैं शरण तुम्हारी । भव सागर सों कीजे पारी ॥
प्रेम भक्ति हिरदै परकासो । जन्म मरण दुख मेटो साँसो ॥
पुनः अब मस्तक तिलक करीजे । पाछे तीन आचमन लीजे ॥

॥ दोहा ॥

बहुरों प्राणायाम करि, जपिये फिर ओंकार ।
पूरक सोलह नाम करि, चौंसठ कुंभक धार ॥

॥ चौपाई ॥

रेचक फिर बत्तीस उतारे । उलट पलट करि द्वादश बारे ॥
कृष्ण ध्यान ही बहुरि करीजे । तन मन सुरति जहाँ ले दीजे ॥
कंचन मन्दिर मन में धारो । रतन जड़ित के खंभ निहारो ॥
अद्भुत बिछे बिछौना तामें । अधिक सिंहासन दमके जामें ॥
रतनों जड़ित कांति अति ताकी । शोभा वरण सके कहा जाकी ॥
तापर श्री कृष्ण ही दरसें । शोभा सिंधु रूप में सरसें ॥
अंग अंग छवि निरखत जावो । नख सिख सों लखि नैन सिरावो
धूप दीप दे तिलक करावो । फूल माल गलमें पहरावो ॥
विधि सों प्रभु की पूजा कीजे । परिकम्मा दण्डौत करीजे ॥
फिर ठाढ़ो स्तुती विस्तारे । गुणानुवाद मुख सों उच्चारे ॥
कहे जु पाऊँ भक्ति तुम्हारी । यही दान दो कृष्ण मुरारी ॥
चरण कमल में दीजे वासा । और मिटावो दूजी आशा ॥

॥ दोहा ॥

मन वच कर्म करि यों कहे, सुनो अर्ज सुखरास ।
सामीप्य मुक्ति मोहि दीजिये, करके अप निज दास ॥

॥ चौपाई ॥

बहुरि बैठि छवि नैन निहारे । बारबार जावे बलिहारे ॥
जब लग इच्छा या विधि कीजे । आँख खोलि पुनि जाप करीजे ॥
बहुरो गुरू मन्त्र की माला । फेरे पाँच वही जो काला ॥
पँचवें हरि गुरु को दण्डोते । ऐसों किये पार हो भव ते ॥
या विधि नेम सदा ही कीजे । कबहू खंडित होन न दीजे ॥
चार समय करि पूरन सोई । नातर कीजे बिरियाँ दोई ॥
और वैष्णवों को यों चहिये । भोग लगे बिन कछु नहिं खइये ॥
जल पीवे हरि नाम उचारे । करे आरती साँझ सँवारे ॥
सोवत जागत बैठत फिरते । नामहि जपो नेह कर हरि ते ॥
पहर रात मों ध्यान लगावे । चरण कमल में मन ठहरावे ॥

॥ दोहा ॥

ऐसी भक्ति सदा करे, निरमल हरि गुण गाय ।
साधन यों नित साधते, प्रेम अधिक बढ़ जाय ॥
मरयादा नित नेम सुनि, भक्ति साधना अंग ।
जोगजीत रणजीत पुनि, पूछे बहु परसंग ॥

॥ चौपाई ॥

महा पुराण धर्म तुम गहियो । श्री भागवत विचारे रहियो ॥
यही जु मत तुम नीके लीजो । मेरी आज्ञा में मन दीज्यो ॥
टोपी चोला बाना धारो । पीरी माटी रंग सुधारो ॥
माथे श्री तिलक ही नीका । करो रूप वैष्णव ही का ॥
उनतीसों लक्षण ही धारो । नीके अपना इष्ट संभारो ॥
हरि के पद पंकज में रचियो । पंच विषै के स्वाद जु तजियो ॥
यही संप्रदा परगट कीजो । मृत्यु लोक में यहि जस लीजो ॥
बहुतक जीव ठिकाना पावें । भव सागर में बहुरि न आवें ॥

॥ दोहा ॥

बाना तुम्हरा पहिर के, जो कोइ होय अतीत ।
मुक्ति धाम को जाय है, यों कीजे परतीत ॥

॥ चौपाई ॥

चरणदास ले माथे धरिया । जो उपदेश गुरू ने करिया ॥
हाथ जोड़ पुनि कहि गुरुदेवा । नवधा भक्ति बताबो भेवा ॥
कहा योग का भेद सुनाओ । और योग अष्टांग बताओ ॥
जब बोले शुकदेव गुसाँई । अब कहुँ सो जो प्रश्न पुछाई ॥
तुम्हरे हिरदै भक्ति सदाई । प्रेम उमड़ रहो अति अधिकाई ॥
तो भी नौधा अंग बताऊँ । तेरे पूछन हेतु सुनाऊँ ॥

॥ दोहा ।

सरवन चितवन कीरतन, सुमिरन बन्दन ध्यान ।
पूजन और अरपन करन, दासा तन लो जान ॥
नवों अंग के साधते, उपजे दसवों प्रेम ।
सुधि बुधि जाय नसाय ही, रहे न कोई नेम ॥
सो तुम्हरे ही हीय में, छाय रह्या सब गात ।
जैसे पटकी ओट में, दीपक शिखा दिखात ॥

॥ चौपाई ॥

अरु तुमको हम यह वर दीना । विरह तुम्हारा होय है हीना ॥
एक समै वृन्दावन जैहो । श्री कृष्ण के दरशन पैहो ॥
श्याम सुन्दर तोहि मिलि हैं प्यारे । तोहि दिखावें नित्य विहारे ॥
योग युगति कहि विधि बतलाऊँ । तेरो मन संदेह मिटाऊँ ॥
पहिले भक्ति योग बतलाया । सो सुनिके मन में ठहराया ॥
राज योग की सब विधि जानी । शुकदेव कृपा सों सब पहचानी
सांख्य योग दीनो हरि हेता । समझायो सबही था जेता ॥
सुरति योग हठ योग बखाना । चरणदास शिष ने सब जाना ॥

॥ दोहा ॥

अष्टांग योग की विधि जिती, दीनी जुगति बताय ।
और आठों के नाम जो, दीने सबै सुनाय ॥

॥ चौपाई ॥

यम अरु नियम जु प्रत्याहारो । ध्यान धारना पंच अंग धारो ॥
आसन प्राणायाम सु जानो । अष्टम लै समाधि पहचानो ॥
औरों अंग बहुरि बतलाये । चौरासी आसन दिखलाये ॥
प्राणायाम सह युगति बखानो । आठों कुंभक नीके जानो ॥
पाँचो मुद्रा भेद जु कहिया । चरणदास निश्चय करि लहिया ॥
छहों कर्म के अंग दिखाये । खोल खोल सबही समझाये ॥
अष्टांग योग विधि सो कह दीनों । सांग उपांग सहित ही चीन्हों
मुक्ति होन के जेतक भेवा । चरणदास सो कहे शुकदेवा ॥

॥ दोहा ॥

योग युगति सब ही कही, छिपी रही कछु नाँहिं ।
भिन्न भिन्न महाराज नें, समझ लई मन माँहिं ॥

॥ चौपाई ॥

फिर दिया ज्ञान अज्ञान नसाया । घट में आतम रूप लखाया ॥
नित्त अनित्त जो खोल सुनायो । परमहंस मत सांख्य सुनाओ
चार वेद के भेद बताये । षट शास्त्र मत खोल सुनाये ॥
श्रुति स्मृति के मत हैं जेते । अष्टादश के कहिये तेते ॥
दियो वैराग्य जु कियो निरासी । सिद्धि मुक्ति लों इच्छा नासी ॥
ब्रह्म ज्ञान विज्ञान सुझायो । परमानन्द पद माँहि बसायो ॥
और भेद दियो अपनी इच्छा । सब विधि पूरण कीन्हीं शिक्षा ॥
अपने शिष पर होय कृपाला । बहुत भाँति कर कियो निहाला ॥

॥ दोहा ॥

चरणदास आनन्द में, महा भये झक झोल।
स्तुती श्री शुकदेव की, करन लगे मुख बोल ॥

॥ गायन छंद ॥

कबहू न व्यापे माया तापे, जाके प्रभु शिर कर धरो।
तुव ध्यान मम हिरदै रहे, मन बाणि जस गुण उच्चरो ॥
श्रवण सुनों नित कथा तुम्हरी, पग गमन त्वै पथ करों।
कर जोर दोउ चरणदास माँगे, और सब दुबिधा हरो ॥

॥ दोहा ॥

महिमा अति ही अगाध तव, बरनत आवे लाज।
कह शारद अहिराज थकि, मो बुधि तुच्छ कहा साज ॥

॥ सोरठा ॥

पतित गंग में न्हाय, सो ताके अघ धोय है।
तुम प्रताप अधिकाय, चरणदास दियो परमपद ॥

॥ दोहा ॥

धन्य महीना दिवस धन, धन्य समा धनि ठौर।
जोग जीत गुरु शिष्य दोउ, बसो हिये निशि भोर ॥

॥ चौपाई ॥

डेढ़ पहर दिन सों निधि पाई। चार पहर जहाँ रैन बिताई ॥

दरशन साढ़े पाँच पहर ही । शुकदेव के चरणदास करे ही ॥
इतने में तड़का हो आयो । श्री शुकदेवा वचन सुनायो ॥
हमसों विदा होय तुम जाओ । अब दिल्ली को सुरति उठाओ॥
जा माता के दरशन पावो । उनका हिरदा नेत्र सिराओ ॥
मैं भी उठ अब बन को धाऊँ । गंगा जी में न्हाता जाऊँ ॥
यह सुनि चरणहिदास गुसाँई । मन में धीरज रह्यो जु नाँहीं ॥
अंग अंग सबही मुरझायो । कंठ उसास नैन जल छायो ॥

॥ दोहा ॥

यह गति लखि शुकदेव तब, गहि करि हिये लगाय ।
आँख पूँछे पानि अप, दियो धीरज बहु भाय ॥
अरु मुख सों ऐसे कही, बिछुरन दुख मत मान ।
दरशन हमरे होयँगे, जब जब करियो ध्यान ॥
मन माँहीं निश्चय करो, सदा जु तुम हम संग ।
यही भाव मन राखियो, होय न यामें भंग ॥

॥ चौपाई ॥

चरणदास जब आज्ञा जानी । हाथ जोड़ कर बोले बानी ॥
मोहि पठावो तुम मति जावो । बैठे ध्यान माँहिं जो आवो ॥
जब साष्टांग करी जो बहुते । चलन विचारा उनके होते ॥
पाँव डग मगे सब तन काँपे । चला जाय नहिं आगे तापे ॥
डग यों भरत गये जो हारी । सब ही दृढ़ता मन से हारी ॥

॥ दोहा ॥

जागी विरह अगनि तन सारे । सुबकी लेले आँसू डारे ॥
ऐसा लखा जभी गुरु देवा । निकट बुलाय कियो बहु हेवा ॥
समझायो अरु धीरज दीनी । विरह अगनि कछु शीतल कीनी ॥
बहुत कही मोरी यह मानो । तजो विकलता धीरज आनो ॥
दिल्ली ओर गवन अब कीजे । अपनी माता को सुख दीजे ॥

॥ दोहा ॥

जब शिष्य को दृढ़ता भई, चरण नवायो शीस ।
आँखें भर कहि पहल ही, आप सिधारो ईश ॥

॥ चौपाई ॥

तब उठि शुकदेव गले लगायो । बहुत भाँति ठाढ़े समझायो ॥
धीरज दे चाले शुकदेवा । निरमोही त्यागी निरलेवा ॥
फिरि चाले सो चाले चाले । शिष्य की दृष्टि भई तिन्ह नाले ॥
जब लग दीखे तब लग देखे । ओट भई सुधि रही न लेखे ॥
बैठ धरनि पर लोटन लागे । व्याकुल होय विरह में पागे ॥
भई अवस्था महा वियोगी । सतगुरु बिछुरन के भये मोगी ॥
रोवत कही जु फिर कब देखे । परलै भई जु मेरे लेखे ॥
बैठे लेटे व्याकुल मन में । जैसे पक्षी दौं के वन में ॥
नीर बिना ज्यों मछरी तरफे । मणि को खोय विकल ज्यों सरपे ॥
जैसे सुत माता बिन बाला । तैसे गोपी बिन गोपाला ॥

॥ दोहा ॥

रिध सिध आ दरशाय है, कई भाँति के ख्याल ।
चरणदास लुभियाय ना, गुरु बिछुरन बेहाल ॥

॥ चौपाई ॥

चिंतामणि पा रंक जु खोया । कह हम हाल सो ऐसा होया ॥
ज्यों चंदा बिन रैन अँधेरी । बिन दरशन गुरु यों गति मेरी ॥
अभी हुते हमसों संग छूटो । गुरु दरशन बिन नैना फूटो ॥
जाउ आंख जहाँ तोर गुसाँई । उन बिन रह कहा करिहो याँही ॥
गुरू बिछोहा सहा न जाई । तन में पीड़ा बुधि बौराई ॥
चरणदास सोचें पछतावें । गुरू गये जा ओर चितावें ॥
और कहँ मैं अब कित जाऊँ । कौन ठौर सतगुरू दरशाऊँ ॥
अब जो लहूँ रहूँ उन लारे । संग न छाँड़ँ जो झिड़कारे ॥

॥ दोहा ॥

घड़ी चारलों यों रहे, रूप विरह का धार ।
फिर विचार धीरज गह्यो, कछु अकि सोच निवार ॥
करि प्रणाम वा ठौर को, सात परिक्रमा दीन ।
दोनों कर को मोड़िके, बहुत बलैया लीन ॥

(इति श्री गुरु बिछुरन वियोग वर्णते द्वादशमो विश्रामः)

* अथ दिल्ली गमन वर्णते *

॥ चौपाई ॥

वहाँ सों चले जु तन ढरकाये। जैसे ज्वारी द्रव्य हराये ॥
उतरे ऐसी दशा लिये ही । मन अरु नेत्र उदास किये ही ॥
थके जगे से नीचे आये । मुड़ देखा आगे को धाये ॥
धीरे धीरे गमन जु कीन्हों । ग्राम फिरोजपुर में पग दीन्हों ॥
यहाँ ही रहे कछु नहिं खायो। विरह व्यथा दुख बहुत सतायो ॥
बारंबार कलमली आवे । गुरू बिछोहा बहु तन तावे ॥
सोचि सोचि कहै मन ही माँहीं। उनके संग रहा क्यों नाँहीं ॥
बहुत ही भाँति तरंग उठावे। सोचि सोचि मन में कलपावे ॥

॥ दोहा ॥

ऐसे दिन सब वीत करि, फिर आई जो रैन।
ध्यान करत दरशन दिये, दुख नाशन सुख दैन ॥
वन फल शीत खुवाय करि, पुनि पुनि हृदै लगाय।
दी अशीष कृपाल व्है, विरहा दीन्ह मिटाय ॥

॥ चौपाई ॥

शिर धर हाथ जु आज्ञा दीनी। समझि साँच हिय मान जु लीनी
और कही जब ध्यान लगै हो । ता मधि दरशन हमरा पैहो ॥
सदा रहें हम साथ तुम्हारे । हम तुम कभी होयँ नहिं न्यारे ॥
मिलि माता सों बाना लीजो। बहुरो योग करन चित दीजो

फिर रहियो ज्यों भूप पियारे । छत्रपति लो दरश निहारे ॥
उपदेशो जीवन निस्तारो । भव सागर सों पार उतारो ॥
उँही सकारा होन लखाये । श्राज्ञा दे शुकदेव सिधाये ॥
गुरु का वचन हिये में धारा । दिल्ली ही को गमन विचारा ॥

॥ दोहा ॥

ऐसे ही चलते भये, गुरु चरणन की छाँहि ।
वहीं उतरते चैत्र के, आये दिल्ली माँहि ॥

॥ चौपाई ॥

मात मिलन को हुयो उमाहा । अब के आये लेकर लाहा ॥
कूंचे में लखि चाकर धाया । आवन का घर वचन सुनाया ॥
माता दौड़ि द्वार पर आई । आँखन देख बहुत हरपाई ॥
पड़े भूमि लखि माता आगे। उठि उठि दण्डवत करने लागे ॥
कुंजो ने उठ गले लगाये। माता सुत मिलि भीतर आये ॥
नानी मामी अरु बहु नारी मुदित भई लखि लखि अवतारी ॥
सब ही को दंडोतें कीना । एक एक को ऐसा चीन्हाँ ॥
पलंग बिछा तापर बैठाये । कहै ढील सों अब के आये ॥
एते दिन तुम कहाँ लगाये । सबही हम सों कहो सुनाये ॥
कहि कुंजो बिन देखे तेरे । निश दिन तरसें नेत्र जु मेरे ॥

॥ दोहा ॥

धन्य आज के दिवस को, देख जु पायो चैन ।
हरपि हरपि मुखसों कहै, माता सों सब बैन ॥

॥ चौपाई ॥

देखा भले जु अब हरपाये । मन में स्थिरता आनंद पाये ॥
आगे आते दुख लिये साथा । अब के आये सुख सब गाता ॥
निश्चल दशा कल्पना नाँहीं । भरे आनँद जु नैनन माँहीं ॥
नीके भये हुते जू मोरे । मस्तक तिलक जु गति मति औरे ॥
सुन कर कही जभी औतारी । माता यह सब दया तुम्हारी ॥
अगले दत्तब पुन्य तुम्हारे । पूरे सकल मनोरथ म्हारे ॥
माता कही कहो रणजीता । कही सुफल भइ मन की चीता ॥
मुसकाये सन्मुख महतारी । शुक्कतार की कही जो सारी ॥
ढूँढत थे पूरा गुरु पाया । शरण लई शिर हाथ धराया ॥
उनका नाम कहूँ तुम ताँई । व्यास पुत्र शुकदेव गुसाँई ॥

॥ दोहा ॥

पूरण गुरू को ढूँढतो, मैं गयो गंगा तीर ।
शुक्कतार पर मोहि मिले, व्यास पुत्र सुख सीर ॥

॥ चौपाई ॥

तिलक जु कंठी उनसे लीनी । मंतर दिया जुगति कह दीनी ॥
और बाने की आज्ञा पाई । माता पास पहरियो जाई ॥
नाम धरो चरणदास हमारो । जो उनको लागे थो प्यारो ॥
और कृपा सब खोल सुनाई । माता सुनि आनंद बढ़ाई ॥

धन्य धन्य गुरु कहने लागी । तू भया औतारी बड़भागी ॥
ऐसे सतगुरू पूरन पाये । देखत दरशन विरह नशाये ॥
हाथ जोड़ि कहा परमहिदासा । तुम किरपा भइ पूरन श्राशा ॥
छूटी सभी भटकना भारी । निश्चल भइ अब बुद्धि हमारी ॥
डोलत फिरत सकल विसरैहौं । कहीं बैठ कर ध्यान लगैहौं ॥
तब ही गुनी जु नाना श्राये । रणजीता उठि वाहर धाये ॥

॥ दोहा ॥

भक्ति काज को श्रवतरे, श्रंश ईश श्रवतार ।
मात नना के पग लगे, लीला अधिक अपार ॥

॥ चौपाई ॥

चढ़े जानि चरणन लिपटाये । गहि भुज नाना कंठ लगाये ॥
पास विठाय जु ऐसे कहिया । अबके बहुत दिनां कित रहिया ॥
रणजीता सुन कर मुसकाना । शुकदतार का चरित बखाना ॥
अरु जैसे गुरु दीक्षा पाई । उनके आगे सबै सुनाई ॥
नाना सुनि आनंद में पागे । तबही स्तुती करने लागे ॥
कहि अति ऊँचे भाग्य तिहारे । सतगुरु मिले जगत सों न्यारे ॥
व्यास पुत्र कहा छिपो जु भाई । जिन परीक्षित भागोत सुनाई ॥
उनके सम कोइ त्यागी नाँहीं । सब विधि पूरे तप के माँहीं ॥
महा सतोगुण विष्णु समानी । निर्मल ज्ञान महा विज्ञानी ॥
त्रिगुण ते ऊपर गति जिनकी । सरवर कौन करे अब तिनकी ॥

॥ चौपाई ॥

जीवन मुक्ता ब्रह्म स्वरूपा । मन को जीते आनंद रूपा ॥
उनके दरशन का फल ऐसा । हरि के मिले लहै कोइ जैसा ॥

॥ दोहा ॥

भाग बड़े हम कुलन के, सकल भये उद्धार ।
रणजीता गुरु तुम किये, व्यास पुत्र औतार ॥

॥ चौपाई ॥

तुम तो उनके शिष्य हो आये । संस्कार तुम्हरे अधिकाये ॥
कई जन्म शुभ कर्म कमावे । जाके फल ऐसा गुरु पावे ॥
ऐसा गुरु ढूँढ़ा नहिं पइये । तुम को मिले सु अचरज कहिये ॥
हरि की किरपा पूरन जा पे । ऐसे गुरू मिले जू ता पे ॥
तुमहूँ को औतारी जानूँ । धुर सेती कौतुक पहिचानूँ ॥
क्यों न मिलें तुम को गुरू ऐसे । अवश्य मिले जैसे को तैसे ॥
जैसे कूँ तैसा संग लेवे । और ठौर शोभा नहिं देवे ॥
यों सुन कर बोले महाराजा । तुम प्रताप भये पूरन काजा ।

॥ दोहा ॥

कृपा बड़ों की पाइये, राम भक्ति शिरमौर ।
औरों गुरु पूरे मिलन, सत संगत में ठौर ॥

मन में ऐसा चाव ही, बार बार उपजंत।
करूँ योगही ध्यान जो, पाऊँ ठौर इकंत॥

(इति श्री चरणदासजी का बाना धारन त्रयोदशो विश्रामः)

---

* अथ योग ध्यान वर्णते *

॥ चौपाई ॥

ऐसे वर्ष उन्नीस विताया। बरस बीसवाँ लगने आया॥
एक ठौर दिल्ली में पाई। जहाँ आय के गुफा बनाई॥
बीरमदे के नाले पासा। छीदी बस्ती लोग सुवासा॥
जहाँ जाय कर गुफा बनाई। पक्की चूने की बनवाई॥
दो दो गज चौरस सजवाई। गंगा सनमुख द्वार रखाई॥
ताके आगे छप्पर छाई। गुफा मध्य गद्दी बिछवाई॥
तापर बैठि सुजुगत कमाये। लोक भोग सबही बिसराये॥
धीरज धार जु रहने लागे। पारब्रह्म के रंग में पागे॥
पांचों इन्द्रिय कर्म सकेरी। इन्द्रिय ज्ञान जुगति सों हेरी॥
मन को बुद्धि के साथ लगाया। साज ध्यान का सब बनि आया॥

॥ दोहा ॥

सात पहर रहे ध्यान में, पहर दिनाँ रहि बार।
बैठ जु सतसंगत करें, संध्या गुफा मँझार॥

॥ चौपाई ॥

पूरण ध्यान होय जब आया । लै उपजी आपा बिसराया ॥
ध्याता ध्यान ध्येय के माँहीं । कभी कभी विलय हो जाँहीं ॥
सब ही शिथिल गात हो जावें । दो दो दिन बाहर नहिं आवें ॥
फिर यों पाँच पाँच दिन जानों । ताड़ी लगे रहें गलतानों ॥
छटवें दिनाँ सुरति में आवें । तब वे कछू औगरा खावें ॥
ऐसी भाँति दिनाँ दस दस ही । लै के माँहिं रहें जो बस ही ॥
इक इक पक्ष मास लों चढ़िया । फिर वहाँ ते आगे को बढ़िया ॥
जब समाधि पूरी बनि आई । गिनती जहाँ रही नहिं काही ॥

॥ दोहा ॥

मन मारा तन वश किया, तजे जगत के भोग ।
सतगुरु राखा शीस पर, तब बनि आया योग ॥

॥ चौपाई ॥

यम अरु नियम पहिले आराधे । चौरासी आसन फिर साधे ॥
प्राणायाम किया विधि सेती । प्रत्याहार सँभाला हेती ॥
और धारना का अंग धारा । शून्य ध्यान में मन को मारा ॥
अठवाँ अंग समाधि लगाई । पाप पुण्य की व्याधि मिटाई ॥
छहूँ कर्म शुद्ध करि साधा । तन में कोई रही न बाधा ॥
पाँचों मुद्रा भी सधि आई । तीनों बंध सधे सुखदाई ॥

महाबंध साधा बल जोधा । पाँचों वायु लई परमोधा ॥
प्राण जो और अपान मिलाई । सुषुमन मारग माँहि चलाई ॥

॥ दोहा ॥

षट चक्कर को छेद करि, चढ़े गगन को धाय ।
परमानंद समाधि में, दसवें रहे समाय ॥

॥ चौपाई ॥

ध्याता ध्यान ध्येय जहाँ नाहीं । सुरति लीन भई लय के माहीं ॥
जाना पड़े दिवस नहिं राता । इक रस मान षट ऋतु भाँता ॥
आपा गया आपदा नासी । एकै रहा आप अविनाशी ॥
चौबीसों भये लीन जु माहीं । जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति नाहीं ॥
जहाँ न तुरिया तत निरवाना । ज्ञान रहित वह पद विज्ञाना ॥
परले का सा समय भया है । लै धारी का सभी गया है ॥
तिरगुण रहित परम सुख पावे । ताका आनंद कहा न जावे ॥
भया जु आनंद आनंद माहीं । दूजा संशय रहा कछु नाहीं ॥

॥ दोहा ॥

सिधि साधक करणी थके, थाकी सभी उपाध ।
सेवक स्वामी मिलि रहे, होकर रूप अगाध ॥
चरणदास महाराज ने, ऐसे करी समाधि ।
श्री शुकदेव प्रताप से, लई सितावी साधि ॥

॥ दोहा ॥

पिंडस्थ ध्यान प्रथम किये, सुरति निरति लौ लाय।
कमल कमल को देखते, भँवर गुफा रहे छाय ॥

॥ चौपाई ॥

परम ज्योति जहाँ रूप लखाये। वंक सुधा रस पी छकि छाये ॥
ब्रह्म शब्द जहाँ अनहद बाजे। मन सों निज मन होकर राजे ॥
पाँचों इन्द्रिय भई निरोगी। पंच विषय की रही न भोगी ॥
ब्रह्म रन्ध्र तक पहुँचे जाई। अद्भुत ठौर जहाँ सुखदाई ॥
सहस्र कमल दल में जा छाये। जहाँ सतगुरु के दरशन पाये ॥
ता पर तेज पुन्ज छवि राशे। मानो सूरज कोटि प्रकाशे ॥
ता पर अमर लोक की शोभा। लखि उपजी परमानंद गोभा ॥
परम पुरुष जहाँ स्वेत सिंहासन। ताहि निरख नाशी भव वासन ॥
ऐसे चरणदास कहलाये। ध्यान माँहिं यों दरशन पाये ॥
ऐसे भक्तराज महाराजा। किये जु अपने पूरन काजा ॥

॥ दोहा ॥

भाँति भाँति साधन किये, सब ही देखन काज।
कलियुग में दुर्लभ हुता, सो कीना महाराज ॥
दोनों मारग देखिया, विहंगम और पिपील।
पहुँचे तुरिया देश में, बहुत न लागी ढील ॥

योग युक्ति द्वादश बरस, कीन्हीं चाव लगाय।
चरणदास बलवंत पर, जोगजीत बलि जाय॥

(इति श्री योग साधन नाम चतुर्दशो विश्राम.)

---

* अथ गुफा दग्ध होन वर्णते *

॥ चौपाई ॥

एक दिना कौतुक भया भारी। सो देखा बहुते नर नारी॥
महाराज थे ध्यान मँझारी। दोउ पट दे तहँ साँकर मारी।
पहर रात रहे पावक जागी। एक पड़ोसी के घर लागी॥
हो प्रचण्ड बहु भवन जलाये। उड़े पतंगे वहाँ लौं आये॥
हुता न साधक वहाँ वा बारा। इनके छप्पर को भी जारा॥
द्वारा जरा गुफा मधि लागी। प्रीतवान लखि आये भागी॥
कोई कहे पानी भर लाओ। गुफा जले या वेगि बचाओ।
कोऊ नाम ले इन्हें पुकारे। कोई हाथ अपने सिर मारे।

॥ दोहा ॥

कोइ पुकारे रुदन करि, कोइ कहै होय हरि चाह।
अग्नि ओर कोइ दौड़ि है, कोइ खैंचे वा बाँह॥

॥ चौपाई ॥

वाजे व्याकुल धरती लोटें । जलती देख गुफा की सोटें ॥
कोइ कहैं ये हरि के प्यारे । वेही इन्हें बचावन हारे ॥
जो थे इनके सेवक मिंता । तिनको भई अधिक ही चिन्ता ॥
बहुत जतन करि ताहि बुझाई । इतने में पो फाटन आई ॥
काहू जा नाना सों कहिया । आई सुनि कुंजो दुख पइया ॥
चादर ओढ़ वेगि ही धाई । बहु नारी संग लागी आई ॥
व्याकुल भई नहीं सुधि काया । रणजीता कह बोल सुनाया ॥
वाही छिन नर बहुत लगाये । काढ़ि गुफा से बाहर लाये ॥

॥ दोहा ॥

सब ने लखि अचरज कियो, काया जरी जु नाहिं ।
प्रभु सों यह विनती करी, चेतन हो दरशाहिं ॥

॥ चौपाई ॥

आसन बँधा ध्यान ही लागे । चरणदास ओढ़ी हरि पागे ॥
देखा अंग आँच नहिं लाई । साधक भी पहुँचा था आई ॥
करके जतन समाधि जगाई । खुली आँख तन की सुधि पाई ॥
चेतन होय सभी तन हेरा । कहि मुख कहा हो रहा बखेरा ॥
मात नना सों कहि क्यों आये । अरु क्यों ये नर नारि घिराये ॥
माता ने सुनि यही उचारी । देखो गुफा जली है सारी ॥
परमेश्वर ने तोहि बचाया । तेरा जन्म नया होइ आया ॥
कहन लगे सब हरि धन धन ही । जलत बचाये अपने जनही ॥

क्यों नाहीं प्रभु करैं सहाया । आगे भी प्रहलाद बचाया ॥
महाराज कर जोड़े भाखा । यही साँच भगवत तन राखा ॥
तब बोले मुख यों नर नारी । चरणदास धन हो अवतारी ॥
ध्यान तुम्हारा देखा ऐसा । अगले सुने संतन का जैसा ॥

॥ दोहा ॥

नाना अप घर ले गये, चरण परे नर नारि ।
अद्भुत लीला ही करी, जोगजीत बलिहारि ॥

॥ चौपाई ॥

नर नारी दरशन को आवें । ये इनको कछु नाहिं सुहावें ॥
मन ही मन में सोच बिचारा । अब कहिं अस्थल करूँ नियारा ॥
आछी ठौर जो हो सुखदाई । जहाँ न बस्ती बहुतै छाई ॥
एक सेवक समझा कहि दीनी । भूमि ढूँढ़ने आज्ञा कीनी ॥
सो वह ढूँढ़ ठीक करि आया । महाराज को आन सुनाया ॥
एक ठौर आछी ही पाई । कोरी परी न किन्हूँ बनाई ॥
फतेहपुरी महजीद के नेरा । छीदी बस्ती वास सुखेरा ॥
महाराज के भी मन आई । अपनी आँखों देखूँ जाई ॥

॥ दोहा ॥

गये देख परसन भये, और कही यों बोल ।
यहाँ ही अस्थल साजहूँ, नाप करो अरु मोल ॥
मोल लई वह भूमि ही, अस्थल किया सँवार ।
लागे राज मजूर बहु, शीघ्र भया तैयार ॥

श्री स्वामी चरणदासजी महाराज की राजवेष छवि

ये किये साज जु राज के, गुरु आज्ञा से जोय ।
तन सों दीसें भूप से, मन सों लिप्त न होय ॥

पृष्ठ—११७

प्रकाशक :-
श्री गुरु चरणदासीय साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट, जयपुर

बैठक का अस्थान सज, करा रसोई स्थान ।
भंडारे की कोठरी, सुन्दर रची सुथान ॥
बैठे हुते जु ध्यान में, सतगुरु कही सुनाय ।
कोइक दिन रह भूप ज्यों, हमरी आज्ञा भाय ॥
उसी भाँति रहने लगे, बाँकी छवी बनाय ।
कुरसी ऊपर भूप ज्यों, जोगजीत अधिकाय ॥

(इति फतेहपुरी स्थान स्थापना पंचदशो विश्रामः)

---

* अथ श्री महाराज की भूप छवि वर्णते *

॥ दोहा ॥

दो बीसी चाकर रखे, रजत कड़े कर घाल ॥
बस्तर अंग साजे सबै, भाल तिलक उर माल ॥

॥ चौपाई ॥

जुदी जुदी तिन्हे टहल जु दीन्हीं । जैसा जिस लायक जो चीन्ही।
तहाँ बिछाये फरस बिछौने । रतन जड़ित कुरसी सज सोने ॥
ठाढ़े एक चँवर सिर ढारे । पीकदान एक कर में धारे ॥
एक चिलमची झारी राखे । एक मुसाहिब हित की भाखे ॥
एक मुन्शी ही लिखने वारा । ब्राह्मण एक रसोईदारा ॥
एक करावे नित ही स्नाना । पूजा माँहिं टहल को स्याना ॥

सकल सौंज नीके कर जाने । महाराज के गुण पहिचाने ॥
एक टहलवा बसन सजावें । भाव सहित सों चुनि पहरावे ॥

॥ दोहा ॥

एक गुप्ती का टहलवा, सेज पलंग इक साज।
एक चरण सेवन करे, पौढ़ें जब महाराज ॥

॥ चौपाई ॥

नाऊ एक मसालहि बारा । पानी लावें दो पनिहारा ॥
म्याँना पाँच कहार उठावें । हो असवार कहीं जो जावें ॥
काम टहल को राखे दोई । जोई मँगावें लावे सोई ॥
चौबदार दो द्वारे रहैं । मीठे वचन सभी सों कहैं ॥
पाँच कलावत बानी गावें । जब ताँई वे आज्ञा पावें ॥
बारह प्यादे ड्योढ़ी आगे । चरणदास के चरणों लागे ॥
अपनी अपनी टहल सजावें । महाराज करि भक्ति रिझावें ॥
चरणदास औतार खिलारी । जोगजीत तिनपर बलिहारी ॥

॥ दोहा ॥

भक्तराज ऐसे रहैं, बीते निशि अरु भोर।
ऐसा आनंद वहाँ नहीं, जिनके लाख करोर ॥

॥ चौपाई ॥

अब उनकी सब चाल बताऊँ । भिन्न भिन्न करि ताहि सुनाऊँ ॥
एक पहर के तड़के नितही । जागें उठि बैठें दृढ़ मत ही ॥

चौकी ऊपर जाय विराजें । दाँतुन करें स्नान जू साजें ॥
बैठ जु आसन सौंज सजावें । हरि गुरु ही का ध्यान लगावें ॥
गुरू मन्त्र की द्वादश माला । हित सों फेरें दीन दयाला ॥
पूजा पाछे दान विचारें । करें संकल्प सों ले जल डारें ॥
सो नित नये विप्र को देवें । ऐसो नित्त नेम ही सेवें ॥
भूषण वस्तर बहुरि सजावें । भूषन कैसो भेष बनावें ॥

॥ दोहा ॥

कुरसी ऊपर बैठ ही, बाँकी अति छवि धारि ।
बहुतक आवें दरश को, हिन्दू तुर्क नर नारि ॥

॥ चौपाई ॥

राजा रंक अतीत जु आवें । शाह अमीर आ शीस नवावें ॥
सब पर दृष्टि एक सी जानों । कृपा करें मेघन ज्यों मानों ॥
अमृत वचन बोल सुख देवें । दीन दुखी के दुख हर लेवें ॥
लेइ न कोई भेंट ज्यो लावे । सब को दे मन आस पुजावें ॥
पहल पहर दरवार लगावें । बहुरि उठें जा भोजन पावें ॥
दोय पहर इकान्त जु घर ही । जो ही भावे सो ही कर ही ॥

॥ दोहा ॥

पिछले पहरे बैठिके, संध्या लों दरबार ।
बहुरि करें फिर आरती, साध संत नर नार ॥

॥ चौपाई ॥

ताल मृदंग शंख झाँझ बजावें । दुंदुभि बँसुरि बजे सब गावें ॥
सब ही करें सुचित्त लगावें । भक्तिराज संग आनँद पावें ॥
फिर समाज की आज्ञा पावें । बैठ कलावत वाणी गावें ॥
ज्ञान योग भक्ति वैरागा। हरि जस सुन हो सब अनुरागा ॥
कबहू महा हुलस हरषावें । कबहू नैना जल बरसावें ॥
कबहू गोत मार रह जावें । श्याम सुन्दर सों ही दरशावें ॥
अर्ध रात्रि लों होय समाजा । कीर्तन चर्चा और न काजा ॥
फिर सब ही को विदा करावें । हँसि हँसि बोल जु मोद बढ़ावें ॥
बहुरि टहलवा सेज सँवारे । तापर पोढ़ें हरि के प्यारे ॥
चरण सेव दो सेवक लागें । ढोरें पवन सु जब लगि जागें ॥

॥ दोहा ॥

ये किये साज जु राज के, गुरु आज्ञा से जोय ।
तन सों दीखें भूप से, मन सों लिप्त न होय ॥

॥ चौपाई ॥

आठों सिद्धि दई शुकदेवा । संग रहत हैं कारण सेवा ॥
ठाढ़ी रहें दोऊ कर जोरे । टहल करन से ना मुख मोरे ॥
बारंबार यही चित लावें । सोई करें जो आज्ञा पावें ॥
श्यामचरणदासा निर्मोही । रहित वासना चाह न कोई ॥
मन सों न्यारे तन सों भूपा । अब तिनकी छवि कहूँ अनूपा ॥
बरणूँ ध्यान योग छवि तिनकी । बाँकी मूरति साँवलि जिनकी

कुरसी ऊपर . बैठे. राजें । चरचा करें सिंधु ज्यों गाजें ॥
उन वचनों के बहु नर प्यासे । चातक मानों स्वाँति की आसे ॥

॥ दोहा ॥

कर पद मेंहदी रच रही, नख शोभा अधिकाय ।
चरणकमल दोउ रंग भरे, जोगजीत वलिजाय ॥

॥ चौपाई ॥

कंचन तोड़ा दहिनें पाँही । बाँयें कंगना अति छवि छाई ॥
पीत वसन केसर रंग वोरे । नख शिख भूषण छवि कछु औरे ॥
टूक पेचा फेंटा सिर सोहे । कलंगी तुर्रा मो मन मोहे ॥
जीमा चुस्त पहरि अंग राजे । बड़े फेर का दामन साजे ॥
तामें तुकमा रतन जड़ाही । मोतियन को गल हार पड़ा ही ॥
सुंदर चोटा अधिक विराजे । शोभा सार पीठ पर साजे ॥
गोल .भुजन. पर सोहैं बाजू । नौरतनन के सुन्दर साजू ॥
पोंछी रतन. जड़ाऊ साजे । जहाँगीरी पहुँचन में राजे ॥
मेंहदी लाल लसत कर सुंदरि । नहुमत पीठ हथेरी मुंदरि ॥
श्याम वदन अरु मूछें वाँकी. । पाप भजें जिन पाई झाँकी ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम भरे दृग जो .वड़े, रचे उनमुनी लाय।
छके श्याम शुक दरस में, होठ ललित मुसकाय ॥

भौंहैं तनी कमान ज्यों, श्री जु विराजे माथ।
समा लिये आनन्द विषे, जोगजीत के नाथ॥

गुप्ती ढिंग धारे रहें, कष्ट निवारण काज।
भक्तों की रक्षा करें, चरणदास महाराज॥

चौंतीस वर्ष वपु ध्यान यह, परगट दियो सुनाय।
जोगजीत हिरदे धरे, जन्म मरण मिटजाय॥

(इति श्री स्वरूप राज छबि वर्णन षोडशो विश्रामः)

अथ श्री महाराज चरणदास जी के एकसौ आठ नाम
माला वर्णते

॥ अरिल्ल ॥

भक्ति चलावन काज जगत में, जन्मे जीव दया के साज।
पतित उधारन जीव उबारन, जै जै श्री महाराज॥ १॥

नाना विधि के नाम तुम्हारे, गुण को अन्त न पार।
कछु कछु वरणूँ पातक हरणूँ, बुध यों किये विचार॥२॥

जगन्नाथ जगपति जगजीवन, पुरुषोत्तम निरलेव।
लीलाधारी कौतुक भारी, देव न जानत भेव॥३॥

भक्त वत्सल और संत सहायक, रक्षाकरण दयाल।
गर्व निवारण दुष्ट पछारन, दीनन के प्रतिपाल॥४॥

कष्टहरण सुखकरण शिरोमणि, सुखदाई दुख साल ।
काम निवारण शील सरोवर, दूर करण जग जाल ॥५॥
हरि अवतारी धीरजधारी, संतोषी निर्वाण ।
क्षमावंत और प्रेम अहारी, दाता निरअभिमान ॥६॥
सतवन्ते गोपाल मनोहर, शीतलचित्त उदार ।
ध्यानवली और निर्मल ज्ञानी, आप विचारन हार ॥७॥
योगी पूरे लक्षण सूरे, सब जीवन किरपाल ।
वरदायक फलदायक सब विधि, दूसर करन निहाल ॥८॥
शोभनजी के कुल उजियारे, प्रागदास गलमाल ।
कुंजो माई गोद सिरावन, मुरलीधर के लाल ॥९॥
चरणदास रणजीत गुसाँई, महाराज परवीण ।
गुरुदेव प्यारे नाम तुम्हारे, पुण्य बढ़त अघ छीन ॥१०॥
हिये सुमरनी धारण गुप्ती, कंगन विराजे पाँव ।
श्री तिलक पीताम्बर वस्तर, दरशन देख सिराँव ॥११॥
संतन में ऐसे राजत हैं, ज्यों गोपियन में कान्ह ।
मोहन नवल किशोर साँवरे, ठाकुर चतुर सुजान ॥१२॥
कमल नैन घनश्याम चतुर्भुज, किरपानिधि भगवान ।
आदि पुरुष परमानंद स्वामी, करुणामय कल्याण ॥१३॥
श्री कृष्ण केशव बनवारी, नारायण जगदीश ।
सर्वमयी घट घट के वासी, पूरण विश्वावीस

महाराज कहि डरिये नाँहीं । दृढ़ता राखो मन के माँहीं।
या अस्थल के खाविंद हमही । होरे होरे बोलो तुमही ।
जागे ना कोइ चाकर मेरा । औं पुनि ऐसा उठे बखेरा।
चरणदास है नाम हमारा । गुरु किरपा से करुँ उपकारा ।
चोरन कहि बकसो प्रभु मोरे । शरण पड़े पग लागें तोरे।
सौंज लेउ नेत्र हमें दीजे । हमरी चूक माफ अब कीजे ।

॥ दोहा ॥

महाराज मुख से कही, नैन दिया उजियार।
उसी समय सूझन लगा, दूर भयो अँधियार ॥

॥ चौपाई ॥

सभी गिरे चरणन के माँहीं । सौंज लेउ कहो घर को जाहीं।
महाराज कहि सब तुमको दीना । तुमने कष्ट बहुत ही कीना।
चोर कहैं यह दान समाना । यों नहिं लें हमरे यह आना।
भक्तराज कहि वचन हमारा । जो मानो तो होउ सुखारा॥
नहिं लेहो तो सबही मरि हो । हमरी बात साँच ही धरि हो ॥
डर दिखलाया औंर कर जोरे । उनके मन लेने को मोड़े॥
पाँचों गठरी शिर धरवाई । औंर कहा तुम मेरे भाई॥
किती दूर पहुँचावन धाये । फिर अपने अस्थल में आये॥
ऐसे दयावन्त उपकारी । जैसे तरुवर हैं फलधारी ॥
अरु सरिता जो मीठे जल की । महाराज अधिके इन *बलकी॥

*उपरोक्त वृक्ष तथा नदी से अधिक परोपकार गुणवाले

॥ दोहा ।

उपकारी दाता बड़े, दयावन्त, गंभीर ।
परमारथ के काज को, ज्यों सूरा रणवीर ॥

॥ चौपाई ।

जगे टहलवा तिन्हें पुकारे । जल करो गरम न्हान भई बारे ॥
चौंक उठे उन्हों करी सँभाला । खुला देख कोठे का ताला ॥
बरतन तामें एक न पाया । डरपे मन संदेह उपाया ॥
फरस चाँदनी चौंरी नाँहीं । चावल बिखरे भू के माँहीं ॥
सभी टहलवन यही विचारी । ले गये चोर चीज गई सारी ॥
महाराज को आन सुनायो । पानी को बरतन नहिं पायो ॥
चूक हमारी सोवत भई । चीज सभी चोरन हर लई ॥
पास तुम्हारे सोइ रहा ही । बाहर रही सो सकल चुराई ॥
भक्तराज कहि चुप हो रहियो । काहू सों सुपने मत कहियो ॥
गई पुरानी नौतन अइहै । दूर करो जो मन ते भइ है ॥

॥ दोहा ॥

भोर जाय तुम मोल ही, लावो सौंज सजाय ।
करो गरम जल माँट में, न्हान समय भयो आय ॥
एक पड़ौसी जागही, देखी उन सब बात ।
लीला श्री महाराज की, फैल गई भये प्रात ॥
सुनि इत उत सों नारि नर, आये अस्थल माँहिं ।
पूछें श्री महाराज से, सुन सुन हँसें हँसाहिं ॥

कायथ को कारज भयो, आय नवायो माथ ।
जोगजीत कारज सफल, चरणदास शिर हाथ ॥

※ अथ खत्री को प्रसंग ※

खत्री इक सेवा करे, धरे पुत्र की आस।
एक दिनाँ कहि खोल कर, महाराज के पास ॥
चरणदास वासे कही, एक नहीं ले दोय ।
पूत जोड़ला होयँगे, शुकदेव कृपा जोय ॥
महाराज जो कही थी, सो ही भया प्रकाश ।
जोगजीत दो सुत भये, ताकी पुजवी आश ॥

※ अथ सेवक सिंहराज को वर्णन ※

पानीपत का बानियाँ, सिंहराज जेहि नाम ।
करता था वह आमली, लेत इजारे ग्राम ॥

॥ चौपाई ॥

बाहर से आ जब घरहि रहावे । नितप्रति दरशन को वह आवे ॥
पहर पहर बैठा ही रहता । सुख सों नाहिं कामना कहता ॥
एक दिन तहँ वा चाकर आया। बेटी भई जु वाहि सुनाया ॥
खुशी हुता तबही मुरझाना । महाराज ने मरम पिछाना ॥
कहि तोय चाकर कहा सुनाई । सुनत उदासी जो तोहि आई ॥
खोल्ह-कहो तुम हमरे यहाँ ही । हमसों छिपी जु राखो नाहीं ॥

सिहराज कहि सुनो सुखधामी । तुमतो हो प्रभु अंतर्यामी ॥
वेटी भई तीन थी आगे । ताको सुनि मन सोचन लागे ॥

॥ दोहा ॥

चरणदास कहि खोल मुख, सुता सु हमने लीन ।
ताके पलटे पुत्र ही, सुन्दर तो को दीन ॥

॥ चौपाई ॥

करि दंडोत खुशी घर आये । वेटा की शादी करवाये ॥
भाई बन्धु अरु मित्र बुलाये । देख सभी अचरज मन लाये ॥
बौरा भया भाँग कै खाई । वेटी को वेटा ठहराई ॥
किसी किसी ने पूछन चीन्हीं । उलटी रीति कहा यह कीन्हीं ॥
सिहराज ने छिपी न राखी । सबसों कही उजागर भाषी ॥
वेटी बदले वेटा पाया । यह वेटा शाही दरसाया ॥
यह वेटी लीनी महाराजा । हमको वेटा दिया सु आजा ॥
वेटी ले वेटा मोहि दीन्हाँ । यों या को मैं उत्सव कीन्हाँ ॥

॥ दोहा ॥

निश्चय वेटा होयगा, मेरे दुविधा नाँहिं ।
पुत्तर की शादी करी, हुलसि हुलसि मन माँहि ॥

॥ चौपाई ॥

नारि पुरुष दोऊ हुलसाये । होय है वेटा निश्चय आये ॥
दिनाँ छटी के यों मन लाये । भवन श्री महाराज

लड़की दीनी गोद मँझारी । लो पलवा कहिं अपनी वारी ॥
महाराज कहि धाय बुलावो । पलवाई हम पास दिवावो ॥
यों करि तिया पुरुष मगनाये । महाराज अप अस्थल आये ॥
एक वर्ष में यों बन आयो । सुन्दर सुत उनके उपजायो ॥
बेटी महाराज की प्यारी । नीबो नाम सुलक्षण धारी ॥
बड़ी भई जब व्याह जु कीन्हों । दान दहेज बहुत ही दीन्हों ॥
आगे नाम निसानी जानों । ताके बेटी भई जु मानों ॥
वाका व्याह आप ही साजा । छूछक जोगजीत दिये दाजा ॥

॥ दोहा ॥

फिर अब वर्णन करत हूँ, अस्थल ही की बात ।
महाराज सुख से रहें, आनंद में दिन जात ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिना लेटे महाराजा । मंत्री पवन ढुरावे साजा ॥
वासों बात करत मन भाये । बातन ही में यों ले आये ॥
अब हाँ सों मन भयो उदासा । जाय करूँ जंगल में वासा ॥
मंत्री कही सुनो महाराजा । बहुतों के सारत हो काजा ॥
यहाँ से कहीं अभी मत जावो । गुरू के दीये आनंद पावो ॥
जो अपने मन यही उपावो । कोई दिन रामत करि आवो ॥
भक्तराज सुन के यह बाती । खुशी भये कहि मोय सुहाती ॥
दोय महीने रामत माँहीं । हिर फिर के पुनि आवूँ हाँ ही ॥

॥ दोहा ॥

ठहराई निश्चय करी, चाले गंगा ओर ।
आधे चाकर संग ले, आधे रख वा ठोर ॥
आधे ही वैशाख में, म्याने होय सवार ।
पीत ध्वजा फहरात ही, देखन चले बहार ॥
मेले के दिन ना हुते, अरु पर्वी कोइ नाँहिं ।
घाट छोड़ औघट गये, सैल करन बन माँहि ॥

॥ चौपाई ॥

बेली बढ़ रह्यो गंगा धोरे । अधिक उजाड़ भयावन ठोरे ॥
महाराज वहाँ पहुँचे जाई । मोड़ राह एक टेढ़ी आई ॥
वहाँ से निकसि सिंह एक आया । लई जँभाई अरु अँगड़ाया ॥
देखत संग के मनुष्य डराने । पाछे ही को सभी हटाने ॥
और कहार नहीं ठहराने । वे हू म्याना छोड़ भगाने ॥
होरे होरे नाहर आया । महाराज को शीस नवाया ॥
गिरी पूँछ श्रवण ढरकाये । ठाढ़ा भया नार निहुराये ॥
भक्तराज कर झोला दीना । निकट बुलाय बहुत हित कीना ॥
कही कि करता राम सँभारो । याही जन्म में हो निस्तारो ॥
चौरासी में बहु भरमाये । अब तुम हमरे दर्शन पाये ॥
हरि का नाम विसरियो नाँहीं । निशिदिन जपियो धर हिय माँहीं
यों कहि कान पकड़ जो लीना । वाके सरवण मन्त्र जु दीना ॥
अपनी माला दी पहराई । धन धन वाके भाग्य बड़ाई ॥

शिर पर हाथ धरा पुचकारा । कही कि तू अब भया हमारा ॥
करूँ उपदेश हिये में धारो । भूख न लागे जीव न मारो ॥
जनम मरण से सिंह छुटायो । हरि के मारग माँहिं लगायो ॥

॥ दोहा ॥

तब नाहर परसन्न हो, शीस धरा पग माँहिं ।
देख सिमटि आये सबै, दूर रहा कोउ नाँहिं ।

॥ चौपाई ॥

अनुचर देखि सभी हरषाने । चरणदास औतारी जाने ॥
नाहर सब आ निकट निहारा । तब था भय पुनि लगा पियारा ।
एक एक को शीस नवाया । संत स्वभाव नाहर दरशाया ।
महाराज की आज्ञा पाई । धीवर म्याना लिया उठाई ।
आगे चले संग सब धाये । वनपति संग लगे ही आये ।
गंगाजी तट जाय विराजे । करके स्नान तिलक ही साजे ।
पूजा करि कछु भोजन पायो । फेर सिंह को निकट बुलायो ॥
वाके मुख में सीत दिया ही । प्यार जु करके विदा किया ही ॥

॥ दोहा ॥

सिंह गया वन ओर ही, ये चाले कहिं और ।
देखन को बहु चाव करि, नई नई ही ठौर ॥
रामत में लीला भई, और बहुत ही भाँति ।
तिन में यह वरणन करी, देख जु ऊँची काँति ॥

॥ चौपाई ॥

एक बात सौ कर दिखलावे । सो मोहि अप चरणों से लावे॥
चादर कूवे पर बिछवाऊँ । कूणों चार ईंट धरवाऊँ ॥
वा पर बैठूँ निश्चल जाई । वहाँ दीक्षा मोहि देवे आई॥
वही गुरू मैं चेला जाका । बाना भेष धरूँ मैं वाका ॥
बहुत बार मुख सों यों निकसा। निधड़क कहै कमल ज्यों विकसा
फैली बात शहर में जाई । भक्तराज पै पहुँची आई ॥
जो कोइ आवे बात चलावे । महाराज सुनकर मुसकावें ॥
एक दिना चरणदास गुसाँई । चल कर गये उसी के ठाँई ॥

॥ दोहा ॥

महाराज को देख कर, सिद्ध न आदर कीन ।
ऊँच आसन करवाय अप, जा बैठे परवीन ॥

॥ चौपाई ॥

भक्तराज जब ऊँचे दरसे । सिद्ध जु लखि मन में बहु हरषे ॥
चौंक उठा कहि कितसों आये । ऐसा डिंभ कहाँ सों लाये ॥
महाराज कहि वचन हंकारे। सुन कर आये पास तुम्हारे ॥
सो मैं शिष्य आज तोहि करि हों । हाथ आपनों तो शिर धरिहों
तुम जो कही कूप पर चादर । उठो बिछावो अब ही सादर ॥
जा पर बैठो मौज धरावो । ताके पीछे हमें बुलावो ॥

॥ दोहा ॥

तो ढिंग बैठ जु शिष्य कर, कंठी मंतर देहुँ।
टीका तो मस्तक करूँ, सभी गर्व हर लेहुँ॥

॥ चौपाई ॥

जो साँचा है वचन तुम्हारा। तो शिष्य हूजे आज हमारा॥
नातर शहर छाँड़ि उठि जावो। ऐसा मुख सों फिर न सुनावो॥
यों सुनि सिद्ध वह बहुत रिसाया। कहा कि ऐसा कोइ न आया॥
खड़ा भया कह करि तत्काला। बाँह पकड़ कूवे ढिग चाला॥
बहुत मनुष्य बैठे वा ठोरा। सो भी चले उसी की ओरा॥
सुनकर बहुत मनुप घिरि आये। देखन साँच झूठ को धाये॥
तब उन चादर एक मँगाई। कूवे के मुख पर बिछवाई॥
चारों पल्ले ईंट धराई। ता पर बैठा सिद्ध वह जाई॥

॥ दोहा ॥

नाम जु ले सिद्ध बोलिया, तू भी अब यहाँ आव।
दीक्षा दे मोहिं शिष्य कर, कै झूठा हो जाव॥

॥ चौपाई ॥

महाराज जभी उठ धाये। बैठ चादर पर आसन लाये॥
कुंभक ऊरध पवन चढ़ाये। इक गज सिद्ध से ऊपर धाये॥
कभी आप चादर बैठावें। खैंच पवन कभी ऊपर धावें॥
यह गति जब ही सिद्ध लखाई। उठि साष्टांग प्रणाम कराई॥

थाँर अपना शिर आगे कीना। कंठी तिलक मंत्र जो लीना॥
ले जल कर यों संकल्प धारो। तन मन दे भयो शिष्य तिहारो॥
जेते मनुष्य हुते तव पासा। देख महा मन भयो हुलासा॥
जैं जैं बोल उठे नर लोई। जेते या वर वहाँ थे जोई॥

॥ दोहा ॥

संग लाये वा शिष्य कर, अपना बाना दीन।
एक मास ढिंग राख कर, उपदेश्यो परवीन॥

॥ चौपाई ॥

जो करणी में कसर रहाई। महाराज सो दीन मिटाई॥
गर्व कुटिलता सकल नशाई। परमानंद दे विदा कराई॥
शीतल चित्त बड़े उपकारी। परमारथ को देही धारी॥
सब के सुखदाई मन सेती। सब जीवन सों राखें हेती॥
मूरति श्याम बसे हिय माँहीं। प्रेम सु तो नैनन झलकाहीं॥
रहें जगत में नित ही न्यारे। जोगजीत कहें सतगुरु प्यारे॥

॥ दोहा ॥

सदा रहें आनंद में, काहू द्वेष न राग।
बाहर दीखें भूप से, अंतर में वैराग॥

* अथ योगी जादूगर को उपदेश करण वर्णते *

एक योगी जादूगर भारे। भयो विख्यात दिल्ली में सारे॥
टोना टामन भूत जु सेवे। लोग डराय डरा द्रव्य लेवे॥

चरणदास की कहै घटाई । मार मंत्र करदूँ बौराई ॥
महाराज को लोग सुनावें । भक्तराज तिनको समझावें ॥

॥ दोहा ॥

हरिजन जादू ना लगे, देखत विघ्न नशाय ।
लोगन हो परतीत ना, आप ता पै गये धाय ॥

॥ चौपाई ॥

महाराज ताहि शीस नवायो । अरु प्रशाद ता भेंट चढ़ायो ॥
तब उन ऐसो बोल सुनायो । बचो तभी मम शिष्य हो जावो ॥
नहीं ऐसा मन्तर पढ़ मारूँ । सुधि बुधि तेरी अभी बिसारूँ ॥
भक्तराज हो नम्र बुलाये । करि अंगुलि अप ताहि दिखाये ॥
कहि मो तन सब नाँहि बिगारो । अंगुली पर ही जादू डारो ॥
जो यह अंगुली हले हमारी । तो हम आवें शरण तुम्हारी ॥
योगी क्रुद्ध हो मंत्र उचारे । देख जो लोग डरे भय भारे ॥
कहें लोग यह बुरी कराये । चरणदास यासों उरझाये ॥

॥ दोहा ॥

पढ़ पढ़ मंतर बहु थका, कीनों यह अहलाद ।
शरबत सम लखाय कर, ल्या कहि लो परसाद ॥

॥ चौपाई ॥

ना पीवें महाराज लखाई । महाप्रसाद महिमा घट जाई ॥
श्री शुक श्याम हृदै में ध्याये । अमृत सम विष पान कराये ।

भक्तराज हरि ध्यान समाये । पहर दोय जब करत बिताये ॥
आनंद सों चख खोल लखाये। योगी भय खा चरण पराये ॥
कहि महाराज शरण मैं तोरे । अवगुण क्षमा करो सब मोरे ॥
बार बार बहु विनय कराई । महाराज लखि करुणा लाई ॥
कृपासिंधु ताको समझायो । नरक जान ये करम तजावो ॥
योगी सभी अकर्म तजाये । हरि की भक्ति सेती मन लाये ॥

॥ दोहा ॥

नर नारी जै जै करैं, चरणदास सुख दैन ।
अस्थल में आ विराजिये, जोगजीत सुख चैन ॥

* अथ नादिरशाह को आगम परचा देन वर्णते *

एक अरथ कहुँ और ही, सुनियो संत सुजान ।
सबही लीला चरित का, को करि सकै बखान ॥
तिनही की किरपा दया, हिरदै में परकाश ।
गुणावाद उनके कहत, मन को होत हुलास ॥

॥ चौपाई ॥

जितने दिल्ली के उमराऊ । महाराज सों राखें भाऊ ॥
बादशाह भी हित में रहता । बहुत बार आवन को कहता ॥
पर ये आवन देत न ताकूँ । निश्चय प्रीति बढ़ी थी जाकूँ ॥
एक अमीर अठवें दिन आता । उनकी कह इनकी ले जाता । ॥
एक दिना ये ध्यान मँझारा । आगम सूझा होना सारा ॥

ईरानी एक छत्तरधारी । आवत हिन्दुस्तान विचारी ॥
खोले ध्यान सो सोचन लागे। जो देखा आवेगा आगे ॥
जभी मुसद्दी लिया बुलाई । भिन्न भिन्न कागज लिखवाई ॥
नादिरशाह जु नाम कहावे। हिन्दुस्तान को सज दल आवे ॥
तमाच कुलीखाँ तासु वज़ीरा । वाके संग में बड़ा अमीरा ॥
पहिले काबुल अमल उठावे । अपना वहाँ सूबा बिठलावे ॥
अटक से वह फिर उतरे पारे। भय उपजे पंजाब मँझारे ॥

॥ दोहा ॥

सूबा शहर लाहौर का, लड़े सामने होय।
दिल्ली को लिख लिख रहे, *कुमक न जावे कोय ॥

॥ चौपाई ॥

फेर शाह सों वह मिल जावे । नाम जिक्रिया खान कहावे ॥
गज सिक्का लाहौर मँझारे । करि वह आगे को पग धारे ॥
सुने मोहम्मद शाह डरावे । छोटे बड़े अमीर बुलावे ॥
करे सिताबी मसलत ज्योंही । सजकर फौज चले वा सोही ॥
जा करनाल के खेत मँझारी । होय लड़ाई अति ही भारी ॥
बची खान दौरा अरु भाई। मरें जूझ दोनों बलदाई ॥
दो अमीर मिलें वा ओरी । बातें गुप्त मिलावें चोरी ॥
हार मान है मोहम्मद शाहा। मिले वा सों दिल्ली पतिनाहा ॥
नादिरशाह फतह पा धावे । याही सूँ वह दिल्ली आवे ॥

*फौज

शहर माँहिं तहसील लगावैं । सवा पहर कतलाम रहावैं ॥

॥ दोहा ॥

शहर नवे के मध्य ही, लूट कतल हो रीत।
सत्रह से पिच्चानवे, संवत खोटा बीत ॥

॥ चौपाई ॥

फागुण सुदि दशमी को आवे । किले माँहिं दाखिल हो जावे ॥
वैशाख सुदि आठें के ताँई । फेर शाह ईरान को जाई ॥
दिनाँ अठावन यहाँ ठहरावे । और सरस रहने नहिं पावे ॥
दौलत घणी लाद ले जावे । करके कूँच वतन को धावे ॥
मोहम्मद शाह को नायब थापे । निश्चय जावे रहे न आपे ॥
होय यों ही कर्ता का चाहा । ध्यान माँहिं चरणदास सुझाया ॥

॥ दोहा ॥

यह सब देख जु ध्यान में, लिखवाई औतार ।
भूत भविष्य वर्तमान के, त्रिविधि जानन हार ॥

॥ चौपाई ॥

लिखवाई अपने कर लीनी । वा मंत्री को सौंप जु दीनी ॥
निज हितुअन को दई पढ़ाई । महाराज के जो सुखदाई ॥
एक शिष्य ने पढ़ हिय राखी । नवाब सदुद्दीखाँ सों भाखी ॥
वाका चाकर था बहु प्यारा । कह बैठा की नाँहिं विचारा ॥
सुना-अमीर सोच में रहिया । उसी मुसद्दी से यों कहिया ॥

एक नकल वाकी लिख लावो । जो कोइ समै दाव जो पावो ॥
तव वह महाराज पै आया । हाथ जोड़ के वचन सुनाया ॥
नकल फरद की मोकों दीजे । दास जान कर किरपा कीजे ॥

॥ दोहा ॥

नवाव सदुद्दीखान के, निकसी बात जु पास ।
नकल फरद की लाव लिख, जो तू नौकर खास ॥
वड़ी चूक मोसे भई, तुमही वकसन हार ।
अव तुम किरपा कीजिये, मेरी ओर निहार ॥
यों सुनि दीनदयाल ने, देखा मंत्री ओर ।
याको कागज दीजिये, लिख ले नकल जु और ॥
लिख लीनी दंडौत करि, गया जु वाही पास ।
फर्द दई जा हाथ में, पूरी वाकी आस ॥
पढ़कर राखी जेव में, भोर गया दरवार ।
कुरनश कर ठाढ़ा भया, सो ही रहा निहार ॥
कह्यो चहै कह ना सके, आवे होठन माँहिं ।
कहा कहूँ कह वात यह, कहिवे योगी नाँहिं ॥

॥ चौपाई ॥

या दिन तो उलटा फिर आया । हुई न खिलवत समय न पाया ॥
घर आ अरजी एक लिखाई । खिलवत की तामें ठहराई ॥
वादशाह को जाय दिखाई । पढ़ कर खिलवत वैठे जाई ॥

करि इकान्त पूछन ही लागे । अब तुम कहो हमारे आगे ॥
करि सलाम बोला जु अमीरा । माफ करो जो मो तकसीरा
अर्ज करत सीना कंपावे । बात अटपटी कही न जावे ॥
कही बादशाह खोफ न कीजे । बुरी भली सब अर्ज करीजे ॥
लेकर हुकम कहन ही लागे । मर्म फर्द का हजरत आगे ॥

॥ दोहा ॥

फक्कर इक सरनाम है, नाम चरण ही दास ।
फतेहपुरी मस्जिद जहाँ, है अस्थल उन पास ॥

॥ चौपाई ॥

अचरज देखा ध्यान जु माँहिं । खुदा करे यों होवे नाँहि ॥
तो भी खबर देन कहि आछी । खबरदार होवे सुनि साँची ॥
हजरत चौंक कही जो कहिये खैरख्वाह तुम्हें यों ही चहिये ॥
महापुरुष ने जो कुछ देखा । सब ही हमसों कहो विशेषा ॥
यों कहि फरद जेब तें लीनी । बादशाह के कर में दीनी ॥
पढ़ कर दिल में सोचन लागे । कही कि को लाया तुम आगे ॥

॥ दोहा ॥

मम चाकर सेवक जु उन, इतबारी मन भाय ।
पहिले मर्म सुनाय के, फेर नक्ल लिख लाय ॥

॥ चौपाई ॥

हजरत कही तुम्हीं उन पासा । जाकर मेटो मन का साँसा ॥

और तर मेवा भी ले जावो । सो उनकी ले नज़र चढ़ावो ॥
करनश अर्ज हमारी कहिये । कहो पनाह तुम्हारी चहिये ॥
गोसे में सब बातें कीजो । भेद फरद का सबही लीजो ॥
और जुबानी भी सुनि आवो । फरद माँहिं दस्तखत करवावो ॥
खातिर जमाँ होय यों मेरी । जावो रुखसत करूँ मैं तेरी ॥
जब वह महाराज पै आया । की सलाम चरणों शिर नाया ॥
बादशाह की अर्ज सुनाई । अरु मेवा ले भेंट धराई ॥
और कही टुक खिलवत कीजे । हजरत कही सो सब सुन लीजे ॥
महाराज सब लोग उठाए । अपने निकट नवाब बुलाये ॥
कहि कहो हजरत कहा बखानें । फक्कर दोस्त हम उनको जानें ॥
सुनि नवाब उठि ठाढ़ा रहिया । हाथ जोड़ि मुख सों यों कहिया ॥
एक चूक मुझसे बनि आई । फरद गई थी सो दिखलाई ॥

॥ दोहा ॥

फिर उमराव कहि बैठ कर, हर्फ हर्फ लिया बाँच ।
फिर हजरत मुझको दई, कहि करि लावो साँच ॥

॥ चौपाई ॥

कहि हजरत खादिम मैं तेरा । ऐतक़ाद है पूरा मेरा ॥
फरद माँहिं जो साँची बाता । तो दस्तखत कीजे अप हाथा ॥
यों कहि मुख फिर फरदी दीनी । महाराज ने हित कर लीनी ॥
कही कि ये सब बातें साँची । जो जो तुमने यामें बाँची ॥

फिर कलम ले दस्तखत कीनो। कागज उलट अमीर हि दीनों॥
कह कहियो जा दुवा हमारी। हम तुम माँहिं दोस्ती भारी॥
और मेवा परसाद जु दीना। वा नवाब को रुखसत कीना॥
कुरनश करि नवाब सिधारे। जा हजरत को करी जुहारे॥

॥ दोहा ॥

जो जो कहि महाराज ने, कहि हजरत के पास।
फरदी दीनी यों कही, ये सब बात जु *रास॥

॥ चौपाई ॥

बादशाह अप दस्तखत चीन्हे। वा के पास आप हू कीन्हे॥
कहि नवाब सों नीके राखो। या का भेद कहीं मत भाषो॥
जब नवाब कुरनश करि यहाँ ही। राखी फरद जेब के माँहीं॥
छठे मास फिर काबुल औरा। रोला उठा बहुत ही शोरा॥
तहमाँच कुलीखाँ नाम सुनाया। पहिले अटक फौज ले आया॥
उतरि वारि फिर आया आगे। नादिरशाह की सुनने लागे॥
हिन्दुस्तान सभी भय माना। दिल्ली में घर घर ही जाना॥
बादशाह को फिकर भया ही। उमरावों का होश गया ही॥

॥ दोहा ॥

आया ढिंग लाहौर के, मिल गया सूबेदार।
मोहम्मदशाह उमराव सब, करने लगे विचार॥

*राज़ (भेद)

॥ चौपाई ॥

कर कर फौज सभी इक ठौरी । चले तुजक के पश्चिम ओरी ॥
इत सों ये उत सों वे आये । करनाल खेत में दो दल छाये ॥
बहुरों मँडी लड़ाई भारी । भई जैसे महाराज निहारी ॥
वही जूझा खानहि दोरा । खान मुदफर भई औरा ॥
निजाम शहादत खास समाये । मोहम्मदशाह दे खोफ मिलाये ॥
कूँच किया दिल्ली में आये । कतल करी तासील लगाये ॥
लूट कतल ही के जो पाछे । सब ने जानी मिली जो आछे ॥
भये दोस्त दोउ शाह जु शाहा । मिल मिल मसलत करी उमाहा

* अथ नादिरशाह को परचा देन वर्णन *

एक दिवस बंगले के माँहीं । बैठे दोऊ शाह वहाँ ही ॥
बातन ही में बात चलाई । तालिब इल्म फकीर की आई ॥
है कोइ पूरा शहर तुम्हारे । देखन को है शौक हमारे ॥
मोहम्मद शाह कही बहु फाजिल । और रहत हैं फुकरा साजिल ॥
उनमें खूब चरणहीदासा । फतेहपुरी मस्जिद के पासा ॥
कासब तन रोशन दिल जाका । हम कमाल देखा जो वाका ॥
तुम चलने का पहल बताया । छठे महीने आगे पाया ॥
और हजरत का आवन जाना । जो जो हूआ सभी बखाना ॥
माह और तारीख बताई । कागज में सबही लिखवाई ।
आज तलक देखन में आई । तामें बात न एक रहाई ॥

॥ दोहा ॥

सो ही फरद हम पास है, लिखा सो होनेहार।
नादिर कही मँगाईये, बाँच करें इतबार ॥

॥ चौपाई ॥

मोहम्मद शाह ने फरद मँगाई। नादिरशाह पढ़ हैरत आई॥
मुख सेती यों कही असेखा। अब ताँई हम कोई न देखा॥
तारीख बंद जो आगम कहे। सदी बारवीं में ना रहे॥
इन फुकरा ने अचरज कीन्हा। तारीख महीना सब लिख दीना॥
ये कोइ साध औलिया धुर के। मेटन वाले हैं जग जुर के॥
अब तुम उनको हमें दिखावो। फुकरा का दीदार करावो॥
खोजा मोहम्मद शाह बुलाया। बहुत भाँति वाको समझाया॥
कहियो अर्ज सुनो महाराजा। उनको दरशन दीजे आजा॥

॥ दोहा ॥

नादिरशाह के मन भई, तुम दर्शन की चाह।
महर जो अप कर दीजिये, तुमहो बेपरवाह॥

॥ चौपाई ॥

वहाँ से चल खोजा यहाँ आया। चरणदास को वचन सुनाया॥
मोहम्मद शाह तारीफ सुनाई। नादिरशाह के मन में आई॥
उनको शौक हुआ अति भारी। कहा बुलावो यहीं उचारी॥
बादशाह सुनि यों मन आया। बात न टारी मोहि पठाया॥
याते उनकी खातिर कीजे। नादिरशाह को दरशन दीजे॥

सुन कर चौंक उठे महाराजा । हमको शाहन सों क्या काजा ॥
किले माँहिं काहे को जाऊँ । वासे कहो कि मैं नहिं आऊँ ॥
खोजे ने यहु भाँति कहा ही । मानी नाहीं बेपरवाही ॥

॥ दोहा ॥

खोजे जा नादर कही, सुन कहि शाह मगरूर ।
जाहि निशकची हिन्द को, लावे पकड़ हजूर ॥

॥ चौपाई ॥

मोहम्मद शाह सुन के दुख माना । बुरी कही ऐसो करि जाना ॥
धाये मुगल पकड़ ही लाये । म्यानें में चढ़ कर ही आये ॥
शाह देख कर भया उठ ठाढ़ा । मन शरमिंदा भया जु गाढ़ा
कदम पाँच आगे को आये । दस्तापोशी कर बैठाये
हँस कर कही जु नादिरशाहा । अजब तुम्हारी उलटी राह
हाथ जोड़ कहि तब नहिं आये । गए निशकची गह कर लाये
दरवेशों को यों नहि चहिये । हिन्दू तुर्क समझते रहिये
सुलह कुल्ल अरु खुल्क विचारो । तास्सुब सभी जु दिल सों
महाराज जब उलटि सुनाई । तास्सुब सभी जु हम बिसरा
हिन्दू तुर्क सभी इकसारे । चस्म मारफत खोल निहा
सबे अनम जिस्म ही जानों । सब में रूह एक पहिचान
जाहिर बातन नहीं जुदाई । अलबत खबर हकीकत पा
जब नहिं आये शौक हमारा । अब आये नहिं जोर तुम्हार
हमरो भी दिल में यों आई । देखें नादिरशाह को न

राजी खुशी सजावन लाये । यों मति जानों पकड़े आये ॥
अल्लह लोग न पकड़े आवें । बस में नाहिं किसी के आवें ॥

॥ दोहा ॥

करामात रखते तुम्हीं, हम जानी मन माँहि ।
बिन दिखलाये सो अभी, घर जाना हो नाँहि ॥
कुदरत सब करतार में, देखो चस्म हजूर ।
करामात कहै कहर को, करे जो फक्कर दूर ॥
फुकरा से अड़िये नहीं, अकल हमारी मान ।
जो कोई मिल जायगा, रहै न तेरी आन ॥
शाह कही मौजूद हो, तुम्हीं माजरा देहु ।
नातर हम सेती तुम्हीं, करामात अब लेहु ॥

॥ चौपाई ॥

महाराज जब नजर उठाई । आँखन से दोउ आँख मिलाई ॥
फिर सिर ओर लखा मुसकाई । कलंगी पंछी होय उड़ाई ॥
वहाँ जो हुते अचम्भा चीना । नादिरशाह फिकर मन कीना ॥
कर कर सोच यही मन ठाना । इनको जादूगर पहिचाना ॥
मुख से कही जंजीरें लाओ । इनको पाँवन में पहिराओ ॥
कोठे में रख ताला दीजे । अरु रखवाली मुहकम कीजे ॥
देखो कल्ह और क्या करहूँ । इसके जादू से नहिं डरहूँ ॥
जब ही बेड़ी लाये भारी । महाराज के पग में डारी ॥

॥ दोहा ॥

कोठे में विठलाय कर, ताला दिया सँभार।
विठलाये आगे मुग़ल, करने को रखवार ॥

॥ चौपाई ॥

नादिरशाह दूजे दिन भाई। क़ाज़ी को वहाँ लिया बुलाई ॥
जादूगर की बात सुनाई। काढ़ रवाधत सो दंड धाई ॥
काजी कही यही दंड दीजे। संग सार जादूगर कीजे ॥
ताला खोल देखे वहाँ नाँहीं। बेड़ी रही जु कोठे माँहीं ॥
देख अचम्भा सब को आया। नादिरशाह मन में शरमाया ॥
सोचन लागा दिल के माँहीं। वह दर्वेश गया किस राही ॥
कै थाली विधि रो. न कीना। कै काहू मिलि काढ़ि जु दीना ॥
जो अब के फ़ुकरा यहाँ आवे। तो दिल शुबा सभी मिट जावे ॥

॥ दोहा ॥

हुक्म किया जब शाह ने, गये निशकची थान।
देखे श्री महाराज जी, बैठे अपने स्थान ॥

॥ चौपाई ॥

महाराज वहाँ बैठे पाये। क़ुरसी पर छवि सों अधिकाये ॥
मुग़लों निहुरि सलामें कीनीं। नादिरशाह की सब कह दीनीं ॥
उठिये चलिये तुम्हें बुलाया। हुकम शाह का योंही आया ॥
महाराज सुनि के जो वहाँ ही। अन्तर्ध्यान भये छिन माँहीं ॥

मुगल सभी हैरत में आये । देखत हमसों कहाँ छिपाये ॥
फिर अस्थल में ढूँढन लागे । कहीं न पाये अचरज पागे ॥
चले शाह से मन में डरते । देखें खुदा आज क्या करते ॥
इनके पहिले श्री महाराजे । नादिरशाह पै जाय विराजे ॥

॥ दोहा ॥

कहा वही मैं फ़कर हूँ, नाम चरणहीदास ।
हुक्म आपके सूँ अभीं, आया हूँ तुम पास

॥ चौपाई ॥

जो कुछ चाहो सो करो आजो । कै मारो कै मोहि निवाजो ॥
फिर शाह वेड़ी तौक मँगाई । अपने ही आगे पहिराई ॥
कही जु मुग जादूगर भारे । अब के देखूँ यार तुम्हारे ॥
गह करि कोठे बीच दिवाये । दोय निशकची पास विठाये ॥
कीया सब अप मन का भाया । बड़ा जु ताला द्वार लगाया ॥
जो जो अपने बहु इतबारी । विठलाये चौकी दो भारी ॥
कही जागते चौकी दीजो । जादूगर इतबार न कीजो ॥
खातिर जमा बहुत विधि कीनी । दिल में शुश रहा ना चीनी ॥

॥ दोहा ॥

तभी महल में जायके, रहा पलंग पर सोय ।
यह चितवन दिल पर रही, कभी औलिया होय ॥

महाराज पहुँचे वहाँ, समय जु आधी रात।
नादिरशाह ग़ाफ़िल सोता, ताके मारी लात ॥

॥ चौपाई ॥

मुख सों कही जाग क्या सोवे। जन्म आदम नाहक़ क्यों खोवे ॥
करो याद उसकी जिन दीना। तो कारण रब सब कुछ कीना ॥
जब जागा देखा तब जाना। चरणदास फ़ुक़रा पहचाना ॥
उतर पलँग से नीचे आया। महाराज के चरण पराया ॥
आस पास फिर गया क़ुरबानी। फिर बोला मुख सों यों बानी ॥
हाथ जोड़ि कहि बकसो म्हारी। माफ़ करो तक़सीरें सारी ॥
महाराज हँस कहि गल लाया। बाँह पकड़ ही के बैठाया ॥
वह शरमिन्दा बहु दिल माँहीं। सों ही आँख करे जू नाहीं ॥
नीची पलक निवाया माथा। हाथ बाँध कहि सुनि हो नाथा ॥
मैं मतिहीन नहीं पहचाना। तुम को जो अजमावन ठाना ॥

॥ दोहा ॥

गुनहगार मैं हूँ बड़ा, तुमही बकसनहार।
मैं अजान हो क्या किया, सोवूँ बारम्बार ॥

॥ चौपाई ॥

हमसों बेयदबी बनि आई। खौफ़ अब तन मन में छाई ॥
अब जाना तुम साहिब प्यारे। हो दर्वेश जगत सों न्यारे ॥
बड़े औलिया पूरे जाने। देखा ना तुम और समाने ॥

थर थराय सीना कंपावे । अपना किया समझ मन आवे ॥
मुहम्मदशाह करि सिफत तुम्हारी । अब की बातें करूँ सँभारी ॥
मेरे दिल का शुबा मिटावो । बाँह पकड़ मुझको अपनावो ॥
तकसीरें अब माफ सु कीजे । मेरे हक में दुवा करीजे ॥
अब तो कदमों लगा तुम्हारे । कुरनिस तुमको बारंबारे ॥

॥ दोहा ॥

मिहरबान अब हूजिये, हाथ धरो मो शीश ।
खतरा जब ही जायगा, गुनह करो बखशीश ॥
महाराज कहि दुवा ना, और नहीं बद्दुवाह ।
क़हर महर मेरे नहीं, सुनि हो नादिरशाह ॥

॥ चौपाई ॥

बुरा होय तो रोस न ठानूँ भला होय तो खुशी न मानूँ ॥
राम और सों सब ही जानों । साँच योंहि निरचय मन आनों ॥
जो कुछ करे सु कादर नाथा । मो अतीत के कछु नहिं हाथा ॥
मैं चकरी हरि डोर हमारी । ज्यों वह फेरें फिरे बिचारी ॥
तातें तुम कछु खौफ न आनों । वा ओरी से सब कुछ जानों ॥
वही वही हम ना कछु भाई । लाख लाख मोहि राम दुहाई ॥

॥ दोहा ॥

तेरा शुबा मिटावने, कारण यह कह दीन ।
गुनाह किये के ना किये, सभी माफ हम कीन ॥

॥ चौपाई ॥

दोस्त दिली हम तुम को कीन्हों । तरफ़ आपनी तुम भी चीन्हों
यों कहि बगलगीर ही हूये । रहे नहीं वाके मन दूये ॥
हिल मिल खुशी होन जब लागे । खु़लक प्यार के रस में पागे
रदल बदल खा़लिक की आई । जात सिफ़ात सभी समझाई ॥
दरजे दरजे ही सब खोले । उनकी बोली ही में बोले ॥
शग़ल इश्क़ की चाली बातें । मगन भया बहुते मन पातें ॥
कुछ कुछ नादर सीखन चीन्हा । महाराज प्रसन्न हो दीना ॥
शैर रुबाई आयत हदीसा । चरचा हुई जु बिस्वाबीसा ॥

॥ दोहा ॥

तारीफ़ें करने लगा, होकर वह महज़ूज ।
तुम हो कामिल औलिया, बड़ी समझ अरु सूझ ॥
सद रहमत या शहर को, धन धन है यह देश ।
नादिरशाह मुख सों कही, जहाँ तुमसे दर्वेश ॥
बातन ही में यों कही, जइयद से कुछ गाँव ।
सो लीजे जागीर में, किसी मुरीद के नाम ॥

॥ चौपाई ॥

मदद मास पूरा कर लीजे । भूखों को खैरात करीजे ॥
इसमें मेरी होय निजात । या खा़दिम की राखो बात ॥
महाराजा कहि जमीं न लेहूँ । मिल्क मास में मन नहिं देहूँ ॥
यामें बहुत बखेड़े लागे । सुख की बात सभी जो भागे ॥

जान जर और जमीन न राखूँ । निश्चय कीजो साँची भाखूँ ॥
इनसे खलल होय बहु भारा । हरि का नेह न जाय सँभारा ॥
दिल तो एक कहाँ ले दीजे । वह कीजे क्या ऐसा कीजे ॥
दो दो घोड़े चढ़ा न कोई । जो कोइ दाना धुर का होई ॥

॥ दोहा ॥

इन तीनों के संग तें, लागे बहुत विषाद ।
फिकर उठे छूटे जिकर, बने न पूरा साद ॥

॥ चौपाई ॥

यही जान हम ऐसा कीया । अब नहिं लेवें न आगे लीया ॥
नादिरशाह जब सुन के समझे । चरणदास की साँची रमजें ॥
वाह वाह जब कहने लागे । ऐसे फुकरा सुने जु आगे ॥
इतने में तड़का हो आया । महाराज ने बोल सुनाया ॥
मोहि अस्थल को रुखसत कीजे । कछू मँगाय सवारी दीजे ॥
नादिरशाह सुनके मुरझाया । ऐसा शकुन न वाहि सुहाया ॥
कहा कि रहिये दिन दो चारा । करहूँ और मकान नियारा ॥
जब लग मैं यहाँ तब लग रहिये । मेरी खातिर रहा ही चहिये ॥

॥ दोहा ॥

महाराज जब मुख कही, करता यों ही जान ।
पर दीदारी लोग वहाँ, बिन देखे हैरान ॥

॥ चौपाई ॥

तुम जो कहो सो ही मैं करता। ये ही बात हिये में धरता॥
पर वहाँ लोग बहुत दुख पावें। अन्न और पानी नहिं खावें॥
वे सब जानें पकड़ मँगाये। बड़ी कैद ही में जा छाये॥
उनकी समझ दर्द मोहि आया। वहाँ जाने यों चित्त उठाया॥
नादिरशाह कही लाचारा। सुखन तुम्हारा जाय न टारा॥
कीना हुकम *नालकी आवे। बाबा साहिब घर को जावें॥
मुहरें पच्चीस सौ मँगवाई। महाराज की भेंट चढ़ाई॥
फेर दई अड़ रहा न मानें। कहि रख बरकत होय ख़ज़ाने॥

॥ दोहा ॥

एक यही मोहि दीजिये, चाह करी मन मोर।
मति-माँगियो, किसी फ़ुक़रा से और॥
ख़ुदा की जानियो, तास्सुब कीजो दूर।
हिन्दू हो या तुर्क हो, जान ख़ुदा का नूर॥

॥ चौपाई ॥

नादिरशाह कही यह करिहूँ। सुखन तुम्हारा दिल में धरहूँ॥
हिन्दू तुर्क अब एक निहारे। ये सब मुरशिद करम तुम्हारे॥
महर मोहब्बत करते रहियो। हजरत मुझ को भूल न जइयो॥
यों कह चरणों शीस नवाया। महाराज गहि हिये लगाया॥
पीठ हाथ धर कीन्ही छाया। कहा कि मैं तुमको अपनाया॥

*पालकी

तभी निशकची अर्ज सुनाई। हजरत सजी नालकी आई ॥
दोनों उठे हाथ गहि हाथा। आये पहुँचावन हजरत साथा ॥
इन्हे नालकी में बिठलाया । एक अमीर सु संग पठाया ॥

॥ दोहा ॥

शाह कुरनिस करके हटा, महाराज चले धाय ।
आये अस्थल जब निकट, जै जै भई लखाय ॥

॥ चौपाई ॥

आस पास के जो थे लोई । देखा खुशी भये सब कोई ॥
वही नालकी अरु उमरावो । रुखसत किये कही तुम जावो ॥
आय विराजे अस्थल माँहीं । जिनके हर्ष शोक कछु नाँहीं ॥
माता पै एक मनुष्य पठाया । कही कि मैं अस्थल में आया ॥
माता सुनि मिलने को आई । दर्शन देखि बहुत हरपाई ॥
रहने लगे सदा थे ज्योंही । तिनके गर्व न रंचक क्योंही ॥

॥ दोहा ॥

केते दिन जब हो चुके, चाले नादिरशाह ।
छोड़ा दिल्ली शहर यों, ज्यों शसि पर को राहु ।
मोहम्मदशाह नायब सु करि, चले ईरान को धाय ।
जोगजीत नादिर बहुत, दौलत लई लदाय ॥

* अथ मोहम्मदशाह को दर्शन को आवनो वर्णते *

॥ चौपाई ॥

महाराज की लीला भारी । मोहम्मदशाह ने नैन निहारी ॥
सो वह नित ही खबर मँगावे । खोजा खबर लेन को आवे ॥
महाराज तासों यों भाषें । दुवा हमारी कहियो जाके ॥
तीन महीने गये बिताई । मोहम्मदशाह के मन में आई ॥
कह भेजा जो आज्ञा पाऊँ । तो मैं अब दर्शन को आऊँ ॥
महाराज कहि प्रीति तुम्हारी । आवो आज्ञा भई हमारी ॥
मोहम्मदशाह सुनके अनुरागे । दर्शन को आया बड़भागे ॥
प्रेम प्रीति माँहीं अति पागे । भेट सँभारि धरी ले आगे ॥

॥ दोहा ॥

जड़ाऊ जेवर सभी, सुवरन तोड़ा साज।
मिर्हा थान मेवा जु तर, कहि लीजे महाराज ॥

॥ चौपाई ॥

दरशन को था शौक हमारा । पाया अब दीदार तुम्हारा ॥
सुखी भये अरु नैन सिरानें । तुम्हरे गुण नहिं जाय बखानें ॥
उठि कर महाराज परवीना । उसको लाय हिये से लीना ॥
अपने आसन ढिग बैठाये । बात करन लागे मन भाये ॥
आगे खड़े सभी उमराऊ । महाराज के दर्शन चाऊ ॥
घड़ी चार में रुखसत दीनी । फेरी भेंट कछू नहिं लीनी ॥

बादशाह जब कही उचारे । जो नहिं राखो भाग हमारे ॥
हम तो भेंट चाव सों लाये । कै राखो कै दो बरताये ॥

॥ दोहा ॥

उलटी ले जानी नहीं, राखो विनती मान ।
तब कुछ मन में लेन की, आई कृपा निधान ॥

॥ चौपाई ॥

रद्‌ल बद्‌ल जब बहुते कीना । तब जेवर ले सब कर चीना ॥
नव रतनन की पहुँची राखी । तोड़ा मुँदरी अँगुरी नाखी ॥
तर मेवा सब ही जो लीया । यों मोहम्मदशाह को खुश कीया ॥
थालों में लीने दो थाना । कहा कि तुम्हरा कहना माना ॥
और कही सब आप ले जाओ । होय मुबारिक बरकत पाओ ॥
महाराज तब करसों दीना । हो लाचार मो शिर धर लीना ॥
उठ कर शाह ने कुरनश कीनी । महाराज ने दुवा जु दीनी ॥
आकबत खैर ईमान सलामत । रहियो सदा तुम्हारी शुचमत ॥

॥ दोहा ॥

बादशाह चढ़ तख्त पर, जब ही हुये तैयार ।
बाजे सब बाजन लगे, चलते भई बहार ॥
आवें जहाँ अमीर बहु, प्रभुता की नहिं पार ।
जोगजीत के सतगुरु, मन तब किया विचार ॥

ॐ अथ गुप्त रहन वर्णन ॐ

॥ दोहा ॥

महाराज के मन भई, प्रभुता देहुँ मिटाय ।
भेप धरूँ तन टहलुवा, रहूँ गुप्त कहिं जाय ॥

॥ चौपाई ॥

अप मन्त्री से मता कराये । जेतक चाकर सब समझाये ॥
तुम चिन्ता मत कीजो भाई । इक वर्ष गुप्त रहूँ मैं जाई ॥
अद्भुत कहूँ सुनो यह गाथा । तब शिप चेला किया न नाथा ॥
वर्ष दिना को नेम थपावे । सराय शाहदरे मध्य आये ॥
साधु वेश सो तो उतरायो । नाऊ को अप रूप बनायो ॥
जो कोइ बसे मुसाफिर आई । चंपी ता चर्ण सेव कराई ॥
दीन देस ता को कुछ देवे । धनवन्ते से ना कछु लेवे ॥
धेला दमड़ी देन उचारे । तासे माँगें आने चारे ॥
यों कहि मुख सो जात रहावे । ऐसी नित ही टहल उपावे ॥
जो अनाथ कोइ दृष्टि पराई । करें टहल ता प्रीति लगाई

॥ दोहा ॥

करत टहल जब सोप है, ढिग पैसे धर जाय ।
बहुरि करैं यों और की, ऐसेहि तहाँ कराय ॥

॥ चौपाई ॥

एक मुसाफिर टहल कराई । गठरी ता किन्हि लीन चुराई ॥

उन कहि नाऊ लीन चुराये । ढूँढ़त ढूँढ़त जा पकराये ॥
मारी लात चोर कहा तू ही । नित शठ कर्म करे कहि यूँ ही ॥
बहुत दिवस में हाथ पराई । लोटा मो कहँ देउ मँगाई ॥
चरणदास ताहि वचन सुनाये । मो साथी ले गयो चुराये ॥
कहा दाम सो देहुँ मँगायो । डेढ़ रूपया उन बतलायो ॥
ता शराफ के गये लिवाये । उठ उन चरणों शीस नवाये ॥
देख मुसाफिर हक धक होई । कैसी चोर यह तो बड़ कोई ॥

॥ दोहा ॥

दाम मुसाफिर ले नहीं, उलट भयो आधीन ।
जोरावर करके दिये, वरष दिना यों कीन ॥
वर्ष दिना ऐसो कियो, चरित्र श्री महाराज ।
फिर आये अस्थल विषै जोगजीत सुखसाज ॥

* अथ मजदूर का भेष धारण वर्णते *

॥ चौपाई ॥

महाराज के कौतुक नाना । काहू पै नहिं जाय बखाना ।
जिनको माया मोह न लागे । कंचन धूरि एक सम आगे ।
भूप अमीर बहुत तहाँ आवें । दर्शन करैं बहुत हर्षावें ॥
प्रभुता लखि लखि बहु अधिकाये । महाराज मन कीन उपाये ॥
भक्ति छुड़ावे जगत बड़ाई । किस विधि याको देहि मिटाई ॥
जहाँ जो भेद न पाई । फिर दासन यों कहा सुनाई ॥

जमुना तीर हरषि मन आये। करें स्नान जू प्रेम जनाये ॥
इक मजूर ठाढ़ो वा ठाँईं । कपरा आप जु ताहि सुँपाई ॥

॥ दोहा ॥

फटे पुराने वसन जो, वाके आप सु लीन।
जरीदार जूता सहित, सबही वाको दीन ॥

॥ चौपाई ॥

पटपड गंज मंडी दुरारी। गये तहाँ चरणदास खिलारी ॥
रखे वणिक भारन को दारी। भारत दाल भये दिन चारी
चरणदास अप चूनी खावें। मिले मजूरी रंकन ख्वावें ॥
टहल करत इक दिन मन जोई। मार न खाई कैसी होई ॥

॥ सोरठा ॥

वनियाँ दृष्टि लखाय, दाल चुरा बाँधी जु पट ।
तव उन उठ कर आय, मारी लात जु पीठ में ॥

॥ चौपाई ॥

करन मजूरी दीन छुटाये। कोइ §चिरथव वनिया पै आये ॥
हाथ जोड़ के विनय कराई। मोको रोजी देहु लगाई ॥
नातर भूखन सों मर जाए। वणिक मजूरी फेर लगाये ॥
किनहूँ इनके भेद न पाये। चरणदास जंगल को धाये ॥
मग में इक दीवान मिलायो। हाथ जोड़ि सो चरण परायो ॥

§चिरथव = छलसे

मुख नाम जु शेष सहस्र कहैं,
बरणै जु नहीं इन थाह लहैं ॥
मन बुद्धि थकाय न पार लहैं,
यह का तुछ वाणी जु भाप कहैं ॥

॥ सवैया ॥

अहो जगन्नाथ मोहि देख अनाथ,
सनाथ कियो जू बाँह गही ॥
दुख टारण को सुख धारण को,
श्री सहित महाप्रभु सुधि जु लही ॥
आनन्द भये भय भाज गये,
वोइ आप करी नहिं जात कही ॥
अपने चरणदास को राखिये पास,
अहो दानीश दो दान यही ॥

॥ दोहा ॥

जो जो तुम शरणाय प्रभु, हो भव दुख तिन्ह नाश।
अमरलोक निज धाम में, लहै सदा नित वास ॥

॥ चौपाई ॥

दर्शन करि करि बहु सुख हूये। विरह व्यथा के मिट गये दूये ॥
अब मोहि चरणन के ढिंग राखो। प्रभु मो मन में यह अभिलाखो ॥
तब बोले श्री कृष्ण मुरारी । भेजा है तोहि जगत मँझारी ॥

सो महिपति हृदय धरि लीना। कोटि जतन दर्शन नहिं दीना॥
रही चाह मन गये निज धामा। जब तब स्तुति जु लिखे प्रणामा
एक साँडिया ईस पठायो। पत्र सु लिख ता हाथ भिजायो॥
पाँच गाँव अरु साठ हजारा। साल पै साल करो भंडारा॥
चरणदास सो नाहिं रखाये। सो सब उलटे ही भिजवाये॥
प्रीती नृप की लखि अधिकाये। पूर्णचंद नंदराम पठाये॥

॥ दोहा ॥

राजा पास जु आइया, बहु आदर करि लीन।
आसन ढिंग बैठारिया, गुरु सम आदर कीन॥

॥ चौपाई ॥

पाँच रूपया नृपति पठावें। टहल को नित अनुचर दस आवें॥
इन से नित्त नृप विनय सुनावो। श्री सद्गुरु के दरश करावो॥
कहत जो यों, बहु दिवस बिताये। प्रथमे सुपने दरश दिखाये॥
रानी सहित महल में राजा। जहाँ दिये दर्शन सुख साजा॥
रानी दर्शन करत छिपानी। राजा ने परणाम करानी॥
विस्मय हर्ष ईस अधिकाये। पूरण चन्द्र नंदराम बुलाये॥
आय दोउन ने की परणामा। नृप से हँस कर कहि सुखधामा॥
हम तुम्हें सद्गुरु दर्श करावो। देखें तुम हम को कहा पावो॥

॥ दोहा ॥

तब तुम्हरो, तुम्हरो अभी, नृप मुख वचन सुनाय।
दोउन को परणाम करि, आनँद अधिक बढ़ाय॥

॥ चौपाई ॥

मन चीते सो मन भये काजा । बहु अधीन हो शिष भयो राजा ॥
चरणदास दीने उपदेशा । नाम सुना हिय ज्ञान प्रवेशा ॥
गुरु शिष्य के प्रसंग सुनाये । साख दे बहु लक्षण समझाये ॥
किये वकील दक्षिण नंदरामा । दिल्ली के पूरणचंद सामा ॥
दोउ खिताब राजा को धाये । चरणदास कृपा सुख पाये ॥
नृप आनन्द भये अधिकाये । चार पदारथ रंक जु पाये ॥
चरणामृत ले अँग छिरकाये । व्यंजन बीजन डोल जिमाये ॥
चरणन में परि विनय कराई । निज निज घर सोये सब जाई ॥

॥ सोरठा ॥

पहर जु रात रहाय, नृप टहल को आइये ।
तहाँ न सद्गुरु पाय, जोगजीत पछिताय मन ॥

* अथ निन्दक प्रसंग वर्णते *

॥ चौपाई ॥

बहुत सु राजा आवें जावें । शाह अमीर दरश को आवें ॥
नजर भेंट जो कोई देवें । चरणदास सुपने नहिं लेवें ॥
हिन्दू तुर्क सभी जो आवें । ऊँच नीच दर्शन करि जावें ॥
कोउ अस्तुति कोउ गारी भानें । चरणदास दोउ सम कर जानें ॥
तिलक निन्द बहु निन्दा ठानें । चरणदास साधुन पट जानें ॥
निंदा खबर करें शिष आवें । चरणदास तिनको समझावें ॥

भक्ति प्रचारन प्रभू पठाये । अब हरि ने निज धाम बुलाये ॥

॥ दोहा ॥

शोक न कर कुछ चित में, सुनो शिष्य सुख मान ।
धीरज धारो हरि भजो, मेरे जीवन प्रान ॥
तुम हू तन तजि आइयो, जल्दी मेरे पास ।
रहैं सदा दम्पति निकट, निरखैं रास विलास ॥
परम धाम निज जान की, शिष दइ बात जनाय ।
जोगजीत चरणदास के, चरणन पर बलि जाय ॥

* अथ श्री सहजो बाई जी की महिमा गुरु धर्म वर्णते

॥ चौपाई ॥

हरि प्रसाद की पुत्री जानों । चरणदास की शिष्य पिछानों ॥
तिहुँ कुल दीपक सहजो बाई । सासर पीहर भक्ति बढ़ाई ॥
सत्य शील में साँवत साँची । जग कुल व्याधि सबन सों बाँची ॥
दया छमा की मूरति मानों । ज्ञान ध्यान भरपूर सु जानों ॥
साधुन को ऐसी सुखदाई । मानों भक्ति रूप धरि आई ॥
प्रेम लगन माँहीं अधिकाई । कर्मां और ज्यों मीराँ बाई ॥
योग युक्ति बैराग सुहाये । ये अँग जनु भूपण छवि छाये ॥
अनुभव हिये प्रकाश जु ऐसी । पूरण शशियर चाँदन जैसी ॥

॥ दोहा ॥

जग की व्याधि मिटाय के, लावे हरि गुरु रंग ।
बानी जाकी सोहनी, सुनत जु उठे उमंग ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु भक्ता एकी पहिचानों । दूजी ता सम और न मानों ॥
गुरु को सर्वस आपा अर्पा । गुरु बिन दूजा भाव न थर्पा ॥
गुरु ही ताके सर्वस जानों । जीवन मूरी गुरु पहिचानों ॥
राम से गुरु को अधिकी माने । पूरण ब्रह्म सु गुरु ही ठाने ॥
गुरु का जाप जपे दिन रैना । गुरु का ध्यान धरे हिये चैना ॥
औरन को गुरु मत समझावे । गुरु बिन और न वाहि सुहावे ॥
जैसे सूरा रण में जूझे । ऐसो गुरु मत में आ रुझे ॥
गुरु की भक्ति करन का लाहा । जीवत जग में नेम निवाहा ॥

॥ दोहा ॥

चरणदास की शिष्य दृढ़, सहजो बाई जान ।
ताकी जो गुरु भक्ति पर, जोगजीत कुर्बान ॥

✽ अथ दया बाई की महिमा व गुरु भक्ति भाव वर्णते ✽

॥ दोहा ॥

दूसर कुल में प्रगट भइ, दयाबाई
शरण लई गुरुमुख भई, कृपापात्र

॥ चौपाई ॥

बालापन में गुरु अपनाई । जग में पगन नेक नहिं पाई ॥
हरि रंग में गुरु रंग दीनी । ज्ञान ध्यान में पूरण कीनी ॥
प्रेमा परा भक्ति प्रगटाई । श्री हरि गुरु से लगन लगाई ॥
सर्व सुलक्षण जगत उजागर । शील क्षमा जत सत की सागर ॥
दयाबोध शुभ ग्रंथ बनायो । संत महन्तन के मन भायो ॥
दोहा चौपाई की रचना । अमृतमई मनोहर वचना ॥
प्रथम अंग गुरु वर्णन कीनो । सुमिरन को पुनि रचो नवीनो ॥
सूरातन को अंगहु गायो । प्रेम अंग उत्तम प्रगटायो ॥

॥ दोहा ॥

वैरागहु को अंग शुचि, कथन कियो निरधार ।
श्रवण करे से स्वप्न सम, दीख पड़े संसार ॥
साधु अंग आनँदमई, वर्णन कीनो खूब ।
सन्तन की सेवा किये, मिले कृष्ण महबूब ॥
अजपा जप के अंग में, दई बात सब खोल ।
सुरति श्वास से होत है, सुमिरन अति अनमोल ॥
कर माला मुख की करी, तासे ना कछु काम ।
लगो रहे इकरस सरस, निश दिन आठों याम ॥

॥ चौपाई ॥

पढ़े सुने जो प्रेमी प्यारा । उपजे हिय आनँद अति भारा ॥
सूक्षम वाणी अर्थ अपारा । वेद पुरान शास्त्र को सारा ॥

योगिराज और नृप समुदाई । दूजी अर्जी बहुरि भिजाई ॥

॥ दोहा ॥

लिखा वेगि किरपा करो, दर्शन दीजो आय ।
हम मन नैनन को महा, तुम देखन को भाय ॥

॥ चौपाई ॥

श्री चरणदास जु सुनि तिन अर्जी । जयपुर चले सु किरपा करजी
जबै मनोहरपुर पहुँचाये । राव खुशाली नृपहि सुनाये ॥
राजगढ़ थे नृप करें चढ़ाई । तहँ सो साँडनी स्वार पठाई ॥
राव खुशाली लिख पठवाई । पहिले दर्शन दो इहि आई ॥
चरणदास सतगुरु सुखदाये । तहँ सू ँ राज ही गढ़ को आये ॥
रतनलाल बखशी पहिचानों । राव खुशाली सहित सु जानों ॥

॥ दोहा ।

पाँच कोस चल कर दोऊ, आये लिवावन काज ।
डेरा धामर गाँव में, करवायो सुख साज ॥

॥ चौपाई ॥

राजा तहाँ दर्शन को आये । कामदार सब संग सिधाये ॥
नृप ने आय करी परणामा । हिये लाय मिले सुखधामा ॥
योगीराज सों बहुरि मिलाये । यथा योग हित किये समुदाये ॥
राजा कही जु किरपा कीनी । बहु दर्शन की निधि आ दीनी ॥
सफल कियो तुम जन्म हमारो । रह कर यहाँ जैपुर पग धारो ॥

॥ दोहा ॥

दो दिन रह जयपुर गये, गोविंददेव दर्शाय ।
बालानन्दजी सों मिले, गलता गये सुधाय ॥

॥ चौपाई ॥

मिल महन्त पूजे पुजवाये । जिहि विधि बालानंद मिलाये ॥
रानियों महलों न्योत बुलाये । पर्दन माहीं दर्श कराये ॥
दे दे भेंट तिन्हीं पुजवाये । साधु सेवकन के गृह आये ॥
सब को दे आनन्द हित भारे । अखैराम ले संग सिधारे ॥
तहाँ सों पुनि आये नृप पासे । राजा दर्शन पाय हुलासे ॥
आगे रहे जहीं उतराये । श्री चरणदास परम सुखदाये ॥
कोइ दिन रह कर विदा कराओ । राजा कहि औरो ठहराओ ॥
नृप कहै ठहर हमें सुख दीजे । महाराज कहि विदा करीजे ॥
राजा लखि यों ही मन भाये । विदा करन को पास बुलाये ॥
देख जु उठके करी प्रणामा । मुहुरें भेंट करी इक गामा ॥
आप कहि तुमरी प्रेम अपारी । नाहीं भेंट लीनी हम भारी ॥
बोले मंत्री जोरि जु बाहीं । बिना लिये राजा खुश नाहीं ॥

॥ दोहा ।

कोलीवाड़ो नाम ता, अखैराम सौंपाय
भेष, ग्रन्थन के खर्च को, कही ताहि

अब बसि हैं जा पद निर्बाने । तन छाँड़ें दिल्ली अस्थाने ॥

॥ दोहा ॥

गुप्त सु तो सेती कहूँ, आप ही की उच्चार ।
शुक्तानंद ही को दिया, अपनों में अधिकार ॥
निज स्वरूप सों अब मिलें, या तन सेती नाँहि ।
रहियो बहु आनँद सों, शुकदेव चरणन छाँहि ॥

॥ चौपाई ॥

तुरत तनिक मो पलक झपानी । महाराज भये अन्तर्यामी ॥
चार घड़ी जब रैन रहाई । दशम द्वार फट शब्द कराई ॥
बाजे अनहद बजे घनेरे । सुन सुन साधु जु आये नेरे ॥
जै जै जै जैकार सुनायो । लखि मस्तक लहि देह तजायो ॥
साधुन के हिरदय उमड़ाये । विरह जगा अँसुवा भर लाये ॥
पुनि हिय माँहीं ज्ञान विचारे । जानी सतगुरु भये न न्यारे ॥
सर्वदेशी सर्ववासी जोई । सो कैसे करि न्यारे होई ॥
ऐसे जान भये जू धीरा । करन लगे तन की तदवीरा ॥

॥ दोहा ॥

गंगा जल में न्हवाय के, सजि विमान बैठाय ।
जानों रामत को चले, भक्तराज सुखदाय ॥

॥ चौपाई ॥

दिल्ली के शिष्य सेवक जेते । सुन सुन दल धाये बहु तेते

॥ चौपाई ।

योगी सन्यासी बैरागी । सुन सुन आये बहु अनुरागी ॥
पातशा बहुत पठाये साज़ा । गज निशाण पल्टन सह बाजा ॥
छोटे बड़े मुसद्दी आये । महाराज के नेह पगाये ॥
शेख सइयद मुल्लाने केते । आये लिये मुहब्बत हेते ॥
माल पहिराय फूल बरसावें । अतर गुलाब सुगन्ध छिरकावें ॥
जब उठाय ले चले बिमाना । बहु कहैं कहाँ को कीन पयाना ॥
केतक कहैं इन देह तजाये । यों सुनि बहु अचरज में आये ॥
बहु कहैं इनके बदन ललाई । मरती बर होवे पियराई ॥
कोइ कहे पलकें होठ हिलावें । भाल पसीने बूँद परावें ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानवन्त बहु यों कहैं, जिन पर प्रभू दयाल ।
तिनको मरा न जानिये, बरसे नूर जमाल ॥

॥ चौपाई ॥

बहुत कहैं अचरज नहिं भारी । चमत्कार जो मरती बारी ॥
चरणदास पूरण अवतारे । हम उनके बहु चरित निहारे ॥
कहैं तो कोइ कोई सच माने । जो हैं ज्ञानी सुघर सयानें ॥
कलियुग में सतयुग विस्तारी । भक्ति करा बालक नर नारी ॥
जिनके साधु अपाचक भारे । चमावन्त जाने जग सारे ॥
बादशाह बहु भये उमराऊ । माल मुल्क बहु फौज सजाऊ ॥

संवत अठारह सौ हुते, और उन्तालिस धार।
देह तजी महाराज ने, करि जीवन उपकार॥
अस्सी वर्ष की उम्र में, तन तज श्री चरणदास।
भक्ति प्रकाश जु जक्त में, कियो प्रभु निज पुर वास॥
लीला श्रीचरणदास की, जोगजीत उच्चार।
आदि मध्य और अन्त को, रंचक लह्यो न सार॥
ज्ञान, योग, वैराग ही, भक्ति सहित अँग चार।
चरणदास के पाय हैं, भिक्षुक भिक्षा द्वार॥
कलियुग केरे बीच में, सतयुग तुम विस्तार।
भृगुकुल में यो दिपत हैं, चंद जु गगन मँझार॥
राम श्री शुकदेव जय, श्याम श्रीचरणदास।
जोगजीत निश दिन जपो, जो चाहो सुख रास॥

॥ सोरठा ॥

च्यवन ऋषी के वंश, समर्थ प्रभुजी तुम भये।
भृगुकुल में परशंस, हरि गुरु भक्ति बढ़ा कियो॥

॥ चौपाई ॥

चरणदास को सुमिरन करि हूँ। बारबार चरणन शिर धरि हूँ॥
श्री शुकदेव संप्रदा जानो। चरणदास द्वारा पहिचानो॥
चरणदास के द्वारे आवे। मिट जग व्याधि परम पद पावे॥
बाल वृद्ध नर नारि सुनीजो। चरणदास को ध्यान करीजो॥

मुक्त होन का संशय नाहीं । पूरणब्रह्म भये जग माँहीं ॥
चरणदास दानी बड़ भारे । अभय दान दे जी निस्तारे ॥
ऐसे और कौन उपकारी । राव रंक सम किरपा धारी ॥
चरणदास राम ही जाने । निर्मल दृष्टि सेती पहिचानें ॥

॥ दोहा ॥

जो जन शरणें आइ हैं, उतरें भव जल पार ।
और आवें सो ऊबरें, महिमा अगम अपार ॥

चरणदास परताप सों, सकल विकल होय हान ।
अनहद धुनि में लय लगे, पावे पद निर्वान ॥

चरणदास को जाप जप, चरणदास को ध्यान ।
चरणदास हिरदै धरे, होय परम कल्याण ॥

स्वाँसा सोहं सार ज्यों, पिण्ड मध्य ज्यों जीव ।
चरणदास साधुन विषै, दूध माहिं ज्यों घीव ॥

जहाँ संत तहाँ शान्ति है, जहाँ पंडित तहाँ वेद ।
चरणदास जहाँ सार है, अभिमानी जहाँ खेद ॥

वक्ता ना मुनि व्यास से, इष्ट न कृष्ण समान ।
निष्कामी चरणदास से, जतियन में हनुमान ॥

॥ चौपाई ॥

[हा]राज अति दीनन स्वामी । अति कृपाल उर अंतर्यामी ॥
[बा]ल बुद्धि तुम लीला भाषी । अगम अगाध सौंगाद जु लाखी ॥

यह तकसीर छमा मम कीजो । गुण ग्राहक प्रभु बान गहीजो ॥
मैं बालक तव मुग्ध अयाना । लाड़केलि यह चरित बखाना ॥
चरणदास के शिष्य जे संता । बुद्धिवन्त तुम सभी महन्ता ॥
जिनपर महाराज का बाना । इष्ट जु तुम मम गुरू समाना ॥
नाम कीर्तन तुम्हरो गायो । जैसे तुम, सो ना बनि आयो ॥
औरों यह औगुन हि कमायो । कोइ आगे कोइ पाछे गायो ॥
कोई दीर्घ कोइ सूक्षम बानी । छिमवो सो मम शठ बुधि दानी ॥
कोइ बरणों कोइ याद न आई । सो लिखने को ठौर रखाई ॥

॥ गायन छंद ॥

अधिकारी श्री चरणदास के, महाराज जुक्तानंद सही ।
एक रूप सों गये निज पुर, एक वपु राख्यो मही ॥
परताप, श्री, गुन, आचरन, सब दिपति मानों हैं वही ।
जोगजीत कहै सुनों संत जन, यामें नहिं संशय रही ॥

॥ दोहा ॥

गुसाँईं श्री महाराज जी, जुक्तानंद महंत ।
भक्तराज चरनदास सम, मानें सब मिलि संत ॥
श्री तिलक पीरे जु पट, माँटी रंगे सुधार ।
जै महाराज दंडौत मुख, उचार सु धारन धार ॥
चरणदास के शिष सोई, चतुर अंग ए ध्याय ।
और पट रंग मुख बोलनो, राखो सहज सुभाव ॥

चरणदास शिष होय करि, थपैं जु इन बिन और ।
सो नुगरा निहचैं परैं, जाय नरक मधि घोर ॥

॥ चौपाई ॥

चरणदास की उमर रहाई । उनसठ बरस तब कथा बनाई ॥
महाराज यों आज्ञा दीजो । मो पाछे या परगट कीजो ॥
विक्रम जीत को संवत् ईसा । अष्टादश शत वर्ष उनीसा ॥
वर्ष पैंतालीस के हम जबही । लीला ग्रंथ कह्यो यह तब ही ॥
महाराज परमधाम सिधाये । सो चरित्र तिन पाछे गाये ॥
सन्त महन्तन के गुण भाये । या लीला के संग उपाये ॥
प्रीति सहित या सुने सुनावे । हरि गुरु संतन में हित छावे ॥
जग की व्याधि सकल होय नासा । परमानन्द पद लहै जु वासा ॥

॥ दोहा ॥

लिखि ग्रंथ पूरण कियो, परम जु सुख की खान ।
लीलासागर नाम या, पढ़ सुन होय कल्यान ॥
लीलासागर प्रेम सों, चौकी वस्त्र बिछाय ।
पधरावे ता पर तहाँ, भाव भक्ति हर्षाय ॥
तुलसी चंदन पुष्प पुनि, देवे भक्ति चढ़ाय ।
मेवा अरु मिष्टान्न शुचि, ऋतु फल भोग धराय ॥
वक्ता बाँचे भाव सों, श्रोता सुनि सुख पाय ।
जोगजीत या विधि किये, जन्म सुफल हो जाय ॥
जो या बाणी निन्द है, महामूर्ख मति मन्द ।
सतगुरु की निज भक्ति यह, पढ़ सुन जा दुःख द्वन्द ॥

ऊक चूक बाणी कही, लीजो सन्त सुधार ।
जोगजीत की बीनती, अपनी ओर निहार ॥
सन्त न अचरज कीजियो, मो बुधि शठहि निहार ।
लीला ग्रन्थ कैसो कह्यो, जोगजीत उच्चार ॥
जो जो लीला कहन को, मो मति रही थकाय ।
ध्यावे श्री चरणदास उर, सो आ दई सुझाय ॥
अप लीला को अप कह्यो, मो हिये बस गुरु मंथ ।
जोगजीत या नाम यों, लीलासागर ग्रन्थ ॥

संवत् १८३९ शाके १७०४ मिति मार्गशीर्ष बुदी सप्तमी बुधवार घटिका २० पल ५२ मघा नक्षत्र घटिका ४२ पल ६ वैधृत नाम योगे घटिका ४२ पल ३० विष्टि नाम करण घटिका २० पल ५२ श्री सूर्योदयसमये ब्राह्म मुहूर्ते तुला लग्न वर्तमाने श्री स्वामी श्याम चरणदास जी महाराज सर्व शुभ योगबल दशवे द्वारे ह्वै के अमरलोक धाम पधारे ।

खुरजे में पोथी लिखी जोगजीत अस्थान ।
शिष्य सनेही दास ने सतगुरु आज्ञा मान ॥

इति श्री ध्यानेश्वर जोगजीत जी महाराज रचित लीलासागर ग्रन्थ संपूर्णम् ।।

॥ श्री राम शुकदेव श्री श्याम चरणदास ॥